ध्यानके समय

(पूज्यपाद अनन्तश्री स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती जी महाराज के बाल्य-जीवन को सर्वाधिक प्रभावित करनेवाली रचना)

ॐ असतो मा सद् गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मामृतं गमय।

"ॐकारस्वरूप परमात्मन्! मुझे असत्से मुक्त करके सत्का अनुभव कराइये! अज्ञानान्धकारसे बचाकर ज्ञान-ज्योति दीजिये! मुझे मृत्युके मुखसे बचाकर अमृतत्त्वका अधिगम कराइये।"

वक्तव्य

उन दिनों मेरे मनमें ईश्वरकी प्राप्तिके लिये लालसा तो थी ही, व्याकुलता भी कम न थी। बीच-बीचमें अपनी त्रुटियों एवं निर्बलताओंको देखकर निराशा भी हो जाया करती थी। घर-द्वार छोड़कर कहीं शांत एकांत वनप्रान्तमें जाकर निःस्पंद पड़े रहनेका मन हुआ करता था। इसी बीच महाइच परगनेके कानूनगो ठाकुर झगरूसिंहजीसे परिचय हुआ। थोड़े ही दिनों मैत्री गाढ़ हो गयी। मैं निस्संकोच कह सकता हूँ कि इन तीनस-पैंतीस वर्षोंके सत्संग-प्रचुर जीवनमें वैसा सच्चा, सरलहृदय एवं ईमानदार पुरुष दूसरा नहीं मिला। बादमें मुझपर उनकी श्रद्धा हो गयी और मुझसे विधि-पूर्वक यज्ञोपवीत संस्कार कराकर मंत्रदीक्षा ले ली और अनुष्ठान करने लगे। मुझसे मिलनेके पहले ही वे एक बार सब-कुछ छोड़कर हिमालयकी ओर चले गये थे और लौट भी आये थे। उन्हें एफ.जे. एलेक्जेण्डर द्वारा लिखित अंग्रेजीकी यह पुस्तक (In the Hours of Meditation) "ध्यानके समय" एक महात्मा ने दी थी और इससे ठाकुर झगरु सिंहजीके जीवनमें बहुत ही महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए थे। उन्होंने ही इस पुस्तकके कुछ अंश अनुवाद करके सुनाये। यह मुझे बहुत प्रिय लगी। इससे मुझे बहुत आश्वासन मिला। अपने जीवनके निर्माणके लिये एक दिशा मिली। मेरे कहनेपर उन्होंने पुस्तकका अधिकांश अपनी उर्दूमिश्रित भाषामें बोल दिया और मैंने संस्कृतप्रधान हिंदीमें लिख लिया। कहना नहीं होगा कि मैंने अबतक अंग्रेजी भाषा या लिपि नहीं सीखी है। इसलिये मूल ग्रन्थके साथ इस अनुवादका कितना सम्बन्ध है, यह मैं नहीं कह सकता। इतना अवश्य कह सकता हूँ कि इस पुस्तककी भाषा और भाव पर मेरी इतनी ममता हो गयी है कि इस पुस्तकमें मेरा हृदय बोलता हुआ दीखता है। बहुतोंने इस पुस्तककी प्रतिलिपि करवायी और इससे लाभ उठाया।

मेरे मित्र भाई सुदर्शनसिंह "चक्र" ने यह पुस्तक आद्योपांत पढ़ी। उन्हें यह इतनी भा गयी कि तीन-चार वर्ष अपने पास रखकर फिर उन्होंने इसे

मानस-संघ, राम-वन, सतनासे प्रकाशित करवा दिया। पुस्तककी उपयोगिता इसीसे स्पष्ट है कि अब उस संस्करणकी कोई प्रति ढूँढ़े भी नहीं मिलती। अब मानस-संघके अधिकारी श्री शारदाप्रसाद जी वकीलसे स्वीकृति प्राप्त करके 'सत्साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट' इसे प्रकाशित कर रहा है।

मैंने अपने साधक जीवनके प्रारम्भमें इस पुस्तकका इतना स्वाध्याय किया है, आश्वासन प्राप्त किया है, इसके द्वारा प्राप्त पथ-प्रदर्शनसे लाभ उठाया है कि मैं अपने प्रेमी सत्संगियोंको इससे लाभान्वित किये बिना रह नहीं सकता। इसके पुनः प्रकाशनमें मेरी आन्तरिक इच्छाके साथ-साथ सुदर्शनजीकी प्रेरणा भी पर्याप्त मात्रामें है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक किसी भी साधकको अपने लक्ष्यकी प्राप्तिमें समर्थ एवं सक्रिय सहयोग देगी।

बम्बई —अखण्डानन्द सरस्वती

अक्षयतृतीया 2021

'पाठकों से निवेदन'

पाठकों की अत्याधिक मांगको देखते हुए दुष्प्राप्य इस ग्रन्थको पाँचवीं बार तथा नये कलेवरमें प्रकाशित कर हमें अत्यन्त हर्ष हो रहा है।

परमपूज्य महाराजश्रीकी अत्यन्त प्रिय पुस्तक 'ध्यानके समय' आपकी परमार्थ-पिपासाको और उद्दीपित करे-यह हमारी हार्दिक अभिलाषा है।

अक्षय तृतीया प्रकाशक

13 मई 2013 **-सत्साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट**

विषय-सूची

●

एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति
सत्साहित्यप्रकाशनट्रस्ट

स्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराज

श्रीहरि:

आनन्द-वाणी

(ध्यानके समय)

पवित्रता : 1 :

ऐसा समय आता है जब मनुष्य संसारको भूलकर ऐसे शांतिमय प्रदेशमें पहुँचता है-जहाँ आत्मा स्वरूपस्थित रहता है-परमात्माके सन्निकट रहता है। तब अन्तःकरणकी समस्त वासनाएँ विलीन हो जाती हैं-इन्द्रियोंकी चेष्टाएँ शान्त हो जाती हैं-केवल ईश्वर रहता है।

एक शुद्ध मन जो परमात्मामें स्थित है, उससे पवित्र कोई मंदिर नहीं है। उस पवित्र देशसे-जिसमें परमात्मामें स्थिर मन प्रवेश करता है, दूसरा कोई पवित्र स्थान नहीं है। परमात्मामें उठते हुए विचारकी माप नहीं की जा सकती। पवित्रता, शान्ति, आनन्द इन्हींसे ध्यानकी अवस्था प्राप्त होती है। इसी एकान्त और पवित्र समयमें धार्मिक विचारोंका उदय होता है। आत्मा उद्‌गमस्थानके अत्यन्त समीप रहता है। इसी सम व्यक्तित्वका स्रोत विकसित होकर एक महान् शीघ्रगामी नदका स्वरूप धारण कर सत्य-सनातन कैवल्य-पदकी ओर प्रवाहित होता है।

वह केवल एक है। ध्यानके समय जीवात्मा महान् परमात्मासे उन दैवी गुणोंको, जो उसके स्वाभाविक है, आकर्षित करता है, जैसे-निर्भयता, सत्यता, अमरत्व आदि।

हे आत्मन्! अपने अन्दर उनको आकर्षित करो।

सत्यके साथ उस शान्त समयको ढूँढ़ो।

अपनेको सत्यका तत्त्व तथा ईश्वरका अंश समझो।

वस्तुतः ईश्वर हृदयमें ही रहता है।

●

शान्ति : 2 :

निर्भय रहो, क्योंकि सभी वस्तुएँ नश्वर एवं छायामात्र हैं। समस्त दृश्य-पदार्थोंके अन्तरालमें असत्यता व्याप्त है।

तुम वह सत्य हो, जिसमें किसी प्रकारका परिवर्तन सम्भव नहीं है। तुम स्पन्दनरहित हो। प्रकृतिको अपने साथ खेलने दो, जैसा कि वह चाहती है। तुम्हारा रूप एक स्वप्न है। इसको जानो और संतुष्ट रहो। ईश्वरके अरूपत्वमें तुम्हारा आत्मा स्थित है।

अपने मनको प्रकाशके पीछे जाने दो।

वासनाएँ प्रेरित करती हैं, सीमाकी दीवार खड़ी है; परन्तु तुम मन नहीं हो; वासनाएँ तुम्हारा स्पर्श तक नहीं कर सकतीं।

तुम्हारी स्थिति सर्वज्ञता और सर्वव्यापकतामें है। याद रखो, जीवन एक खेल है। तुम अपना भाग खेलो–अवश्य खेलो! ऐसा ही नियम है। फिर भी न तो तुम खिलाड़ी हो, न खेल है, न नियम है। स्वयं जीवन भी तुम्हें सीमित नहीं कर सकता।

जीवन स्वप्नके तत्त्वोंसे बना है।

तुम स्वप्न नहीं देखते हो। तुम स्वप्नरहित हो तथा असत्यके स्पर्श और धब्बेसे परे हो। इसको जानो! इसको जानो!! तुम स्वतन्त्र हो!! तुम स्वतंत्र हो!!!

शांति, शांति, शान्ति! प्रत्यक्ष शांति है!! शांति, जिसमें परमात्माकी वाणी स्पष्ट सुन पड़ती है। शांति और शांति!!! "मैं सर्वदा तुम्हारे साथ हूँ। तुम न तो मुझसे अलग थे, न रह सकते हो। मैं तुम्हारा आत्मा हूँ। वस्तुतः तुम्हारा आत्मा मैं ही हूँ। मैं विश्वके परे, सब स्वप्नोंके परे अपनेमें स्थित रहता हूँ–और इसी प्रकार तुम भी हो। क्योंकि मैं 'तुम' हूँ। तुम 'मैं' हो। समस्त स्वप्नोंको त्याग दो! मेरे पास आओ। मैं तुम्हें अज्ञान और अंधकारके समुद्रके पार अनंत जीवन और प्रकाशमें पहुँचा दूँगा; क्योंकि मैं ही ये हूँ। क्योंकि तुम और मैं एक ही हूँ। तुम 'मैं' हो, मैं 'तुम' हूँ। जाओ, शांतिमें स्थित होओ! फिर जब समय आयेगा, मेरे शब्द सुनोगे।" ●

फिर समय समीप है। सायङ्काल हो रहा है। बाहर चारों ओर शांति है। स्वयं प्रकृति भी शांत है। शांत प्रकृतिमें मन अधिक शांति तथा तीव्रताके साथ हृदयके अन्तर्देशमें प्रवेश करता है। इन्द्रियोंका चाञ्चल्य शांत होने दो! जीवन बहुत छोटा है। वासनाएँ प्रबल हैं। ईश्वरके लिये कुछ-न-कुछ समय अवश्य दो। वह बहुत कम चाहता है-केवल इतना ही कि तुम स्वयंको, अपने-आपको जानो; क्योंकि वस्तुतः अपनेको जानते हुए तुम उसे जान जाओगे।

परमात्मा और आत्मा एक ही है। कुछ कहते हैं कि-'मनुष्य! याद रख, तू मिट्टी है।' यह मन और शरीरके लिये सत्य है। किन्तु अधिक उन्नत, शक्तिशाली परम-सत्य और परम-पवित्र अनुभव बतलाता है कि हे मनुष्य! याद रख, तू आत्मा है। परमात्मा कहता है कि केवल तू ही अविनाशी है। और सब नश्वर है। कितना ही बड़ा रूप हो, उसका नाश हो जाता है। समस्त रूपोंके साथ मृत्यु और नाश लगे हुए हैं। विचार परिवर्तनशील हैं। व्यक्तित्व नाम-रूपसे ओत-प्रोत है। जीवात्मन्! इसलिए इनसे दूर हो! याद रखो कि तुम नाम और रूपसे परे आत्मा हो। समस्त धर्म इसीमें निहित है कि तुम परमात्मा हो। केवल इसीमें तुम्हारा अमरत्व है। केवल इसीमें तुम शुद्ध और पवित्र हो।

स्वामी बननेका प्रयत्न मत करो। तुम्हीं स्वामी हो। तुम्हारे लिये बनना नहीं है। जीवात्मन् तुम्हीं हो। उन्नति करनेका ढंग चाहे जितना ऊँचा हो; परन्तु समय आयेगा जब तुम जानोगे कि उन्नति समयके अन्दर है, किन्तु पूर्णताका अनुभव अन्तमें है। तुम समयके नहीं, अनंतके हो। यदि परमात्मा है तो 'तत्त्वमसि'-वही-तुम हो। तुम्हारे अन्दर जो सबसे महान् है, उसको जानो! सबसे महान्‌की उपासना करो। सबसे उन्नत उपासनाका रूप वह ज्ञान है-जो बतलाता है कि तुम और वह (सबसे महान्) एक ही है। सबसे महान् क्या है? हे जीव, उसे तुम परमात्मा कहते हो। समस्त स्वप्नोंको विस्मरणकी अवस्थामें डाल

दो। यह सुनकर कि परमात्मा तुम्हारे अंदर है और वही तुम हो, इसे समझो! समझकर देखो! देखकर जानो! जानकर अनुभव करो! तब 'तत्त्वमसि'–वही–तुम हो।

संसारसे असंग हो जाओ! यह स्वप्नसे बना हुआ है। यह संसार और शरीर–वस्तुतः यही दोनों इस घोर स्वप्नके आधार हैं। क्या तुम स्वप्न देखते ही रहोगे? क्या तुम इस स्वप्नके विकट बंधनमें बँधे रहोगे? उठो और जागो। जबतक लक्ष्यकी प्राप्ति न हो जाय, रुको मत!

ऐसी शांति, गहरी शांति जिसमें परमात्माकी वाणीके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं सुन पड़ता, परमात्मा कहता है :

"हरिः ॐ तत्सत्"

तुम शांतिमें स्थित होओ! समस्त दृश्य पदार्थोंके अन्तर और परे आत्मा व्याप्त है। उसका स्वभाव है शांति! शांति!! अनिर्वचनीय शांति!!

●

मुझे पुकारो : 4 :

शान्त समयमें परमात्मा कहता है–'याद रखो, सर्वदा याद रखो! केवल पवित्र अन्तःकरणवाले ही मुझे देखते हैं।'

पवित्रता प्रथम ही आवश्यक है। जैसे वासनाओंके वशीभूत प्राणियोंकी भोगेच्छा परम प्रबल होती है, वैसे ही पवित्रताके लिये तुममें तीव्र आकांक्षा हो और तुम पवित्र बनो। पवित्रताके लिये निरंतर प्रयत्न करो! केवल इसीसे सफलता प्राप्त होगी।

अपने मनसे मेरे दास प्रह्लाद द्वारा मेरे प्रति की गयी यह महती प्रस्तुति करो :

या प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी।
त्वामनुष्मरतः सा मे हृदयात्मापसर्पतु।। (वि.पु.)

परमात्माके पास पहुँचनेके लिये पवित्रता ही उसके पासकी कोठरी है। पहले इसके कि परमात्माके विषयमें सोचो, पवित्रता ही विचारणीय है। पवित्रता ही वह कुञ्जी है, जिसके द्वारा परमात्माके स्थान तक पहुँचानेवाला ध्यानका फाटक खुलता है।

स्वयंको मेरे शक्ति-सिन्धुपर निर्भर कर दो! प्रयत्न मत करो! ढूँढ़ो मत! मेरा अस्तित्व जानो! यह ज्ञान और मेरी इच्छा पर निर्भर हो जाना-आत्मसमर्पण कर देना, तुम्हें बचा लेगा। किसी प्रकारका भय मत करो। क्या तुम मुझमें नहीं हो? क्या मैं तुममें नहीं हूँ? यह जान लो कि जिसे लोग बड़ा समझते हैं, उसका भी नाश हो जाता है।

मृत्यु सर्वत्र है। वह जीवनके समग्र पदार्थोंको निगल रही है। मृत्यु और परिवर्तन आत्माके अतिरिक्त समस्त पदार्थोंको बाँधते हैं। पवित्रता ही इस ज्ञानका पथ है। यही मूल है। पवित्रतासे निर्भयता, स्वतन्त्रता, स्वरूपका अनुभवम-जिसका सार है ही हूँ, प्राप्त होता है।

प्रचण्ड वायु बहने दो; पर जब वासनाएँ धधक उठें, मनोवृत्तियाँ चञ्चल हो उठें, तो शीघ्र ही मुझे पुकारो। मैं सुनूँगा! क्योंकि जैसा मेरे दासने कहा कि मैं चींटीके पैरके भी शब्द सुनता हूँ-शीघ्र ही तुम्हारे पास पहुँचूँगा। जो मुझे हृदयसे पुकारते हैं, उन्हें मैं कभी नहीं छोड़ता।

मुझे पुकारो। केवल हृदयसे ही नहीं, अटल विश्वासके साथ भी। मैं संसार नहीं हूँ, इसके परे आत्मा हूँ। यह संसार मेरे लिये एक मृत शरीर है। मुझसे केवल आत्मासे ही सम्बन्ध है। पदार्थोंके बाह्य विस्तारसे धोखा न खाओ। आत्मा न तो पदार्थोंके रूपमें और न विचारमें ही है। यह शुद्ध, मुक्त, आध्यात्मिक, आनन्दमय, निराकार, निर्विकार चित् है, जिसमें किसी प्रकारका कलंक, पाप, बंधन, सीमा न है, न हो सकते हैं। हे जीव! हृदयके अन्तरतम प्रदेशमें वही तुम हो। इसके सम्बन्धमें तुम्हें अनुभव प्राप्त होगा और अवश्य प्राप्त होगा। क्योंकि मनुष्य-जीवनका यही एकमात्र लक्ष्य है।

याद रखो! याद रखो! मैं तुम्हारे साथ हूँ। मैं तुम्हारे साथ हूँ!!

मैं तुम्हारी समस्त कमजोरियोंके लिये शक्ति हूँ!

मैं तुम्हारे समस्त पापोंके लिये क्षमा हूँ!

तुममें मेरे लिये जो जिज्ञासाएँ हैं, उनमें मैं प्रेम हूँ।

मैं तुम्हारा आत्मा हूँ। मैं तुम्हारा आत्मा हूँ। आत्माके सम्बन्धमें अब समस्त विचारोंको त्याग दो। क्योंकि यह विचार कि तुम्हारा और मेरा आत्मा भिन्न है, अन्धकार कमजोरीके अन्तर्गत है।

प्रकाशके साथ उठो और जानो कि मैं आत्मा हूँ। मैं तुम्हारा आत्मा हूँ। पवित्रता मेरे धामके लिये पथ है और इसीमें मोक्ष निहित है।

हरिः ॐ तत्सत्।

शान्तिः शान्तिः शान्तिः

•

गुरु-शिष्य सम्बन्ध : 5 :

परमात्मस्वरूप गुरुदेव कहते हैं–'मैं सर्वदा तुम्हारे साथ हूँ। चाहे जहाँ जाओ, वहाँ मैं पहलेसे ही उपस्थित हूँ। मैं तुम्हारे ही लिये हूँ। मैं अपने अनुभवका फल तुम्हें देता हूँ। वत्स! तुम मेरे हृदयके धन हो, आँखोंके तारे हो। हम दोनों परमात्मामें एक हैं। हम लोगोंका कर्त्तव्य अनुभव है। इसलिए मैं भलीभाँति तुमसे अपना अभेद अनुभव करता हूँ। मुझे तुम्हें संसारके मरुस्थलमें, सन्देहके जङ्गलमें छोड़नेमें कोई भय नहीं है, क्योंकि मैं तुम्हारी शक्तियोंका विस्तार जानता हूँ। तरह-तरहके अनुभवोंके लिए मैं तुम्हें कहीं भी भेजूँ, मेरी आँखें तुम्हारे पीछे घूमा करती हैं। क्या तुम पाप करते हो? वह मेरी ही उपस्थितिमें होता है। मैं उन्हें देखता हूँ! मैं तुम्हारे सब भावों को जानता हूँ। मैं सब प्रकारके अनुभवों और विचारोंसे तुम्हें उन बंधनोंमें बाँधता हूँ, जो हम दोनोंके मध्यमें है।

मेरा मोक्ष मेरे लिये नहीं है, जबतक कि तुम उसमें भाग न लो। तुम मेरे आत्मा हो। मेरे अनुभवको जितना ही अधिक अपनेमें

आकर्षित करोगे, उतनी ही हम दोनोंमें धार्मिक एकता बढ़ेगी। यही आत्मिक जीवन है। इससे व्यक्तित्वका परदा दूर हो जाता है। तुम मेरे आत्मा हो। मेरे आत्मा तुम ही हो। हम दोनोंके सम्बन्ध इतने घनिष्ट हैं।

मृत्यु और वियोग हमारे संबंधमें बाधक नहीं है। चाहे तुम मुझसे बहुत दूर पैदा हुए हो, चाहे तुम मेरे भौतिक रूपको न देख सको–फिर भी तुम मेरे ही हो। शिष्यत्व मेरे भौतिक रूपको देखनेमें नहीं, मेरी इच्छाओंको समझनेमें है। तुम मेरे बनाये हुए जालसे बाहर नहीं जा सकते! मेरी इच्छाओंको ढूँढ़ो! उन उपदेशोंको–जिन्हें स्वामीने मुझे और मैंने तुम्हे बतलाया है–अनुगमन करो।

उन अनन्त शरीरोंकी अपेक्षा जिनमें तुम रह चुके हो और एकत्व समझ चुके हो, तब अभेदत्वके अत्यन्त समीप रहोगे। शिष्यत्व मेरे विचार और इच्छाओंकी विश्वासपूर्ण उपासनामें निहित है। हम लोगोंमें अपरिमित प्रेम है। गुरु और शिष्यका संबंध सर्वधा अभेद्य है। वह मृत्युसे भी कठिन है; क्योंकि ये दोनों अपरिमित प्रेम और व्यापक इच्छाओंसे बँधे हुए हैं। "ॐ तत्सत्।"

शिष्य धन्यवाद और प्रशंसाके साथ उत्तर देता है–"मेरे स्वामिन्! मेरे ईश्वर! मेरे सर्वस्व! मुझे ऐसी शिक्षा मिलती है–गुरु ईश्वर है। वह परम-सत्यमें मिला देनेकी प्रबल चेष्टा करता है। उसका दृश्य ईश्वर है। मेरी मुक्तिके लिये उसका साहस अथक है। गुरुके नेत्रोंसे मैं भी उस दृश्यको देखता हूँ। सच्चा प्रेम मृत्यु, मोह और जन्मसे भी बलशाली है। मैं मृत्यु और जन्म द्वारा उससे अलग किया जा सकता हूँ। मैं क्या कहता हूँ? असत्य? गुरु ईश्वर है। क्या मैं किसी समय ईश्वरसे वियुक्त हो सकता हूँ?

मैं उसका नाम लेकर इस अन्धकारके समुद्रके उस पार सकुशल पहुँचूँगा–जहाँ समस्त ज्ञान और परम प्रकाश है।

मैं इस मायाके दुर्भेद्य जङ्गलसे होकर निर्भयताके साथ आगे बढ़ूँगा, क्योंकि वह परमात्मा मेरी गतिको देख रहा है। मैं गिरूँगा तो भी वह उठा लेगा! मेरे मार्गमें कण्टकोंको भी वह परिष्कृत कर देगा। मेरे

पथमें संदेह, प्रलोभनरूप वन्यपशु बाधक होने पर वह उन्हें मार डालेगा। अथवा वह मुझे उनके मार्गमें डाल देगा कि मैं उनके साथ युद्ध कर अपनी शक्तियोंको विकसित करूँ। तबतक कोई भी अपनी शक्तियोंको कैसे जानेगा, जबतक वह स्वयं परीक्षा न कर ले?

जीवन-मृत्यु मेरे लिये कुछ भी नहीं है। मैं समस्त सीमाओंको छिन्न-भिन्न कर डालूँगा। मैं समस्त बन्धनोंके पार जाऊँगा। मैं उनमें परमात्माको देखूँगा। गुरुदेव! वही सत्य जो मुझमें है-आपमें भी है।

आप सूर्य हैं तो मैं रश्मि हूँ। वैसे ही मैं सूर्य हूँ और आप रश्मि हैं। उपनिषदोंका महावाक्य-तत्त्वमसि आपके लिये उपयुक्त है, वही मेरे लिये भी सत्य है। हे अनिर्वचनीय कैवल्यपदके परमभाव गुरु!

गुरुके रूपमें मैं आपका अभिनंदन करता हूँ।
ईश्वरके रूपमें आपका अभिनंदन करता हूँ।

हरि ॐ तत्सत्

"तत्त्वमसि"

●

पगली छलाँग : 6 :

ध्यान के समय आत्मा स्वयं कहता है-शान्ति मौनमें रहती है। शान्ति-प्राप्तिके लिये तुम्हें अत्यन्त बलशाली होना होगा। जब इन्द्रियोंकी चञ्चलता वैराग्यकी प्रबल शान्तिमें विलीन हो जायगी, तब मौन अवस्था प्राप्त होगी।

तुम इस संसार मरु-भूमिके पथिक हो। देर मत करो। अन्यथा कहीं नष्ट हो जाओगे। अपने साथ सद्विचारोंके सहायक रखो। सजीव श्रद्धारूप जलका संग्रह करो। समस्त मृगतृष्णाओंसे सावधान रहो। तुम्हारा लक्ष्य वहाँ नहीं है। बाह्य पदार्थोंके आकर्षणोंसे धोखा न खाना। इन सबका परित्याग करते हुए उस पथसे जाओ जो तुम्हारी अन्तर्दृष्टिके एकान्तमें पहुँचाता है। उन बहुसंख्यक मनुष्योंके अनुगामी न बनो, जो

बहुत्वके फन्देमें फँसे हैं। उस पथके पथिक बनो, जिससे महात्मागण दूसरोंसे दूर रहकर अकेले कैवल्य-पदकी यात्रा करते हैं।

सफलता आरम्भिक प्रयत्न पर निर्भर है। आगा-पीछा मत करो। पवित्रतामें कूद जाओ। एक पगली छलाँगमें ही अपनेको परमात्मरूप सिंधुमें डुबा दो। आत्मा ही चरम लक्ष्य है। पदार्थोंके स्वभावमें तुम्हारे लिये इसके अतिरिक्त और कुछ न रह जाय कि तुम उस प्रकाश-स्वरूप परमात्माकी एक रश्मि हो।

शीघ्रता करो, कहीं तुम्हें पश्चात्ताप न करना पड़े। धार्मिक लगन और प्रबल श्रद्धारूप घोड़ोंको कोड़े लगाओ। यदि आवश्यक हो, तो अपनेको मिटा दो। अपने मार्गमें किसी विघ्नको न ठहरने दो। तुम्हारा लक्ष्य संयोगके अधीन नहीं है। अपनी आत्मिक शक्ति और विश्वासके साथ मार्गमें अग्रसर होओ, क्योंकि तुम्हारा लक्ष्य सत्य है। वस्तुतः तुम स्वयं हो, स्वतन्त्र हो। आत्मानुभवकी भाषामें शक्तिके समान मूल्यवान् कोई शब्द नहीं है। आरम्भमें, अन्तमें और सदा तुम शक्तिमान् बनो। स्वर्ग-नरक, देव-दानव इन सबसे निर्भीक होते हुए पथमें अग्रसर होओ।

कोई तुमपर विजय नहीं पायेगा। परमात्मा स्वयं तुम्हारी सेवा करनेको बाध्य है। क्योंकि वह उससे आकर्षित होता है जो वह स्वयं तुम्हारे अन्दर है। इस प्रकार वह एकत्व ही महान अन्तर्दृष्टिका सार है। क्योंकि वह जो तुम्हारे अन्दर है-वह जो तू है-वही ईश्वर है-वस्तुतः तुम्हीं ईश्वर हो।

तत्त्वमसि। हरिः ॐ तत्सत्।

•

अपनेको जानो! : 7 :

विश्वास तो करते हो? फिर अपनेमें विश्वास करो। अपनेमें विश्वास नहीं करते, तो ईश्वरमें कैसे करोगे? तुम्हें स्वयं अपनी रक्षा करनी होगी। परमात्मा उसीकी सहायता करता है, जो स्वयं अपनी

सहायता करते हैं। अपने आत्माको जानो! धार्मिक भावसे इसको नापो। यह जानो कि तुम शरीर नहीं हो! विचार भी नहीं हो। विचार तो देखनेका एक साधन है। किंतु साध्य तो स्वरूप ही है। अतः अन्तिम सत्य अनुभव है। चरम उपदेश यह है कि मनुष्य अपनेको जाने! अपने स्वभावका अनुभव करे।

संदेहके समान कोई पाप नहीं है। संदेहसे विषकी भाँति बैर करना सीखो; क्योंकि यही सबसे बड़ी कमजोरी है। अपनेमें संदेह करना ही वस्तुतः अपनेको पतित समझना है। किसीसे भी–स्वयं परमात्मासे भी भयभीत न होओ। परमात्मा प्रेम करने योग्य है न कि भय? तुम स्वयं से ही कैसे डर सकते हो? परमात्मा ही तुम्हारी आत्मा है! परमात्माके अतिरिक्त किसी वस्तुका अस्तित्व नहीं है! वह तुम्हीं हो। अतः उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्ति तक मत रुको।

पवित्र आत्माका यही अनुभवात्मक विचार है।

•

सच्ची प्रार्थना : 8 :

ध्यानके समय आत्मा अपने आपसे कहता है। निश्चय ही परीक्षा-कालमें कमजोरियाँ बहुत प्रतीत होती हैं, परन्तु कमजोरी ही पाप है। उस समयका यही ज्ञान उन्हें नष्ट कर देगा। एक बार विषको जान लेने पर स्वाभाविक ही तुम उससे परहेज करोगे। एकबार भी अपनी कमजोरियोंको जान लेने पर वे न रहेंगी। तुमने अपनी सारी कठिनाइयोंका हृदय खोल दिया है। तुम्हारे अन्तरतम प्रदेशकी सच्ची लगन इनकी गति बदल देगी। यदि लगन सच्ची है, तो कुछ समयके बाद अवश्य विजय होगी। अटल विश्वासके साथ प्रार्थना करो! धार्मिक युद्धके लिये मनकी गतिका निरंतर निरीक्षण परमावश्यक है। कभी-कभी समय आया करेगा, जब तुम अपने वास्तविक स्वभावकी झाँकी

पाया करोगे—और अपनी कमजोरियोंको जानोगे। उस समय परमात्माको पुकारो! वह तुम्हारी प्रार्थना सुनकर अवश्य अनुग्रह करेगा!

सिद्धान्त भिन्न वस्तु है और जीवन भिन्न है। अनुभव करो कि सत्यके सम्बन्धमें चाहे तुम्हारा बौद्धिक ज्ञान कितना भी बड़ा क्यों न हो, तुम्हारा लक्ष्य तो मनुष्यत्व प्राप्त करना है। अनुभव ही सबकुछ है। तुममें जो पशु है वह बलशाली अवश्य है, किन्तु सच्ची प्रार्थनासे पालतू बनाया जा सकता है। केवल प्रार्थना ही काम पर विजय प्राप्त कर सकती है। परमात्माके नामसे बड़ा कुछ भी नहीं है।

मनोगतिकी निरंतर देख-रेख और सच्ची प्रार्थना—यही तुम्हारे ध्येय हों। इनके द्वारा तुम्हें अव्यक्त सहायता मिलेगी और तुम मुक्त हो जाओगे! मार्ग लम्बा अवश्य है, किन्तु अन्त अवश्यम्भावी है। प्रार्थना बहुत गहरे तक जाती है; वासनाओंको समूल नष्ट कर देती है। निरंतर प्रार्थना करो! प्रार्थना करो! प्रार्थना करो! सर्वदा प्रार्थना करो! प्रार्थना करो! बुरे समयमें अधीर मत बनो! परमात्मा सर्वदा समीप है! वह तुम्हारी पीड़ा, सरलता और सत्यता जानता है!!

उसे पुकारना कभी मत छोड़ो! जब कभी पाप हो जाय, तो भी बलके साथ प्रार्थना करो! प्रार्थनाकी गहराईसे ही परमात्म-प्रेम, अलौकिक दृश्य और आत्मानुभव आते हैं।

अपनेको इस विचारपर स्थिर करो कि परमात्मा सर्वशक्तिमान् है और उसका स्वभाव एक अच्छे गड़ेरियेकी भाँति है, जो अपनी भेंड़ोंकी देखभाल करता है, खासकर उस समय जब कि वे भटकने लगती हैं। यह पहले ही जान लो कि वह विधाता है और प्रेमका स्वरूप है। केवल माँगो और तुम्हें मिलेगा! केवल तलाश करो! वह तुम्हें अवश्य मिलेगा! केवल दरवाजा खटखटाओ, वह तुम्हारे लिये खुलेगा! तनिक प्रयत्न तो करो। वह तुम्हें धार्मिक राज्यमें उन्नत बना देगा।

प्रत्येक प्रार्थना जो तुम करते हो, तुम्हारे समस्त भाव जो परमात्माके लिये उठते हैं वे सब तुममें जोड़े जायँगे और तुम्हें शक्ति देंगे!!

तुम्हारी प्रार्थनाएँ तुम्हें पूर्ण बना देंगी! प्रार्थना पर विश्वास करो! यह साधन है। तुम्हारा हृदय कितना ही अन्धकारमय क्यों न हो, प्रार्थना उसमें प्रकाश लायेगी। क्योंकि प्रार्थना ही ध्यान है। प्रार्थना ही अद्‌भुत दृश्य है। प्रार्थना सर्वशक्तिमान्‌से सम्मिलन है। प्रार्थना सर्वव्यापी और प्रेमस्वरूप परमात्मासे संयोग कराती है। प्रार्थना मनको पङ्ख प्रदान करती है। यदि तुम दलदलमें फँसे हो, तो निकल जाओगे। यदि पहाड़के बोझकी भाँति तुममें दुष्टता आ गयी है और तुम्हारी समस्त धार्मिक भावनायें उनसे दब गयी हैं, तो प्रार्थना तुम्हें उठा देगी। गहराईसे परमात्मा तुम्हारी प्रार्थना सुनेगा। उनका प्रेम तथा शक्ति तुमपर प्रगट होगी और तुम परमात्माके अनुग्रहके प्रमाणस्वरूप उन्नत होओगो। अपने संरक्षक परमात्माकी महत्ताका सङ्गीत गाओगे। सब लोग कह उठेंगे कि यह तो एक महात्मा हो गया। वस्तुतः उसका अनुग्रह ही न्याय है, जो सर्वदा रहता है।

प्रार्थना करते रहो। चाहे अधिकसे अधिक प्रलोभन रूपी शत्रु तुमपर आक्रमण करे। उनकी कोई चिन्ता मत करो। प्रार्थनाके द्वारा अपने स्वभावके चतुर्दिक् एक ऐसा दुर्ग बना लो जो किसी प्रकार तोड़ा नहीं जा सकता।

इसके प्रतिकूल नरकके फाटक भी नहीं खुल सकेंगे। परमात्मा तुम्हें अपनेमें प्रेम और अनुभवकी रज्जुसे बाँध लेगा!

•

कठिनाइयोंका सामना करो! : 9 :

हृदयके अन्तरतम शान्तप्रदेशमें गुरुदेव कहते हैं :–"देहात्म-बुद्धि आत्माके प्रतिकूल निरंतर युद्ध करती है। अतएव सर्वदा सावधान रहो! जीवन सारहीन है। इन्द्रियोंका विश्वास मत करो। इन्द्रियाँ सुख-दुःखसे चञ्चल हो जाती हैं। वत्स! तुम्हें इनके परे जाना है। तुम आत्मा हो।

शरीरका नाश किसी भी समय हो सकता है। सचमुच, उस समयको कौन जानता है? अतः आदर्श पर अपनी दृष्टि अटल रखो। अपनेको उच्च विचारोंसे तृप्त रखो। मृत्युके नहीं, बल्कि जीवनके समय तुम अपने मनको शुद्ध और मुक्त रखो। यदि सहसा मृत्यु भी आक्रमण करे, तो भी तैयार रहो। अपने जीवनको इस प्रकार बिताओ जैसे इसी समय मृत्यु तुम्हारे पास है। वास्तवमें तब तुम जीओगे। समय शीघ्रतासे जा रहा है। परन्तु तुम इस परिमित समयको अनन्त बना सकते हो, यदि अमर भावोंकी कल्पना करो। यदि इस पृथ्वीपर आदर्श जीवन नहीं बिताओगे, तो मृत्युके वश होनेपर पश्चात्ताप करोगे।"

यह 'यदि' शब्द ही अज्ञान तथा दुःका कारण है। सहस्रों जीव यह कहते हुए पश्चात्ताप करते हैं कि यदि मैं शरीरमें ऐसा किये होता तो आज अपने परमात्माके समीप होता।

इसलिए इसी समय अपना समस्त जीवन आदर्शमें अर्पित कर दो और कहो कि 'हे परमात्मन्, अपना साक्षात्कार कराओ! मुझे श्रद्धालु बनाओ और अपने लिये मुझे सच्ची लगन दो।' समस्त भक्तोंकी प्रार्थना सतत अपने-आपसे करो कि 'हे परमात्मन्! मैं केवल तुमसे ही प्रेम करूँ।' मनुष्यकी आत्मा अनन्त है। तुम्हारे पीछे अनन्त शक्ति है। उसे पुकारो। अनुभव करो कि तुम परमात्माके हृदय हो। वह तुममें ही श्वास लेता है। वह तुममें ही रहता और तुममें ही स्पन्दन करता है। तुम्हारा अस्तित्व स्वयं उसमें ही है। यह अनुभव कर लेनेपर समस्त भय नष्ट हो जायेंगे। तुम निर्भय हो जाओगे।

आत्मा गुरुके शब्दोंके उत्तरमें कहता है : "हे परमात्मन्, तुम सब पदार्थोंके कर्त्ता हो। तुम्हारा स्वभाव अनन्त प्रेम है। तुम सर्वत्र हो। स्वीकार करो कि मैं इस विचारमें घनिष्ठताके साथ निमग्न हो जाऊँ। तुम्हारे अतिरिक्त संसारके किसी पदार्थमें आशा नहीं है।"

"भय और मृत्युके स्वरूप सर्वत्र व्याप्त हैं। दुःख और भ्रम चतुर्दिक हैं। इस क्षणभंगुर जीवनका ऐसा ही दृश्य है। जब तुम इस भ्रमको दूर कर दोगे, तब जहाँ मृत्यु दबे पैर घातके लिये सन्नद्ध रहती

है—और जहाँ जीवन दुःखसे घिरा रहता है—वहाँ तुम्हें देखूँगा। भयावह घटनामें भी अपनेको देखने दो। आप भ्रमनाशक हैं। मेरी प्रार्थना सुनिये।"

गुरुके शब्दोंमें उत्तर आता है—"वत्स, परमात्माको पुकारो! निरन्तर परमात्माको पुकारो। केवल उसीका चिन्तन करो। वह अनन्त शक्ति तुम्हारे चतुर्दिक् हो जायगी। वह अनन्त प्रेम तुम्हें आलिंगन कर लेगा और तुम्हारे आत्मासे अनुभवके शब्द कहेगा। परमात्माको सच्चा आत्म-समर्पण तुम्हारी समस्त कठिनाइयोंको हल कर देगा। सच्चा मनुष्यत्व प्राप्त करनेका साधन.... उस अनन्त प्रेमके प्रति सर्वभावेन सम्पूर्णरूपसे आत्म-समर्पण कर देनेमें ही निहित है। निरन्तर ध्यानकी स्थितिमें इसका प्रकाश होता है। जब जीवन भ्रममय प्रतीत होता है, जब मृत्यु सम्मुख रहती है, जब हृदय दुःखोंसे रंजित रहता है, जब मानवीय क्लेश चरम सीमाको पहुँच जाते हैं, तब स्मरण करो। प्रयत्नके साथ स्मरण करो कि इनका सम्बन्ध शरीरसे है और तुम आत्मा हो। प्रत्येक दिन तुम्हारा अन्तिम दिन है, ऐसा भाव रखो! अपने जीवनके प्रत्येक क्षणमें इसका जप करो। सतत अपना जीवन प्रभुको समर्पित करो। उसकी इच्छाकी बुद्धिमत्ता देखो! तब बाघके मुखमें, मृत्युके सम्मुख, नरकके द्वार पर भी परमात्माको पाओगे। यदि तुम्हारे जीवनका ध्येय परमात्माका निरन्तर चिन्तन करना होगा, तो तुम महान् आनन्द और अखण्ड शान्ति प्राप्त करोगे। तब असुन्दर सुन्दर हो जायगा—और जो भयानक प्रतीत होता है—वह प्रेममय हो जायगा।

काले नागसे डसे जानेपर भी तुम सन्तके समान आनन्दोल्लाससे उच्च स्वरोंमें कहोगे कि मेरे प्यारेके पाससे एक दूत आया है। अथवा व्याघ्रके मुखमें संतकी तरह कहोगे—"शिवोऽहम्-शिवोऽहम्।" यही आत्मबल है। वस्तुतः यही उसका प्रकाश है। यही आत्मभाव है, क्योंकि यही आत्म-साक्षात्कार है।

सैनिक अपनी मातृभूमिकी रक्षाके लिये तोपके सामने साहससे

दौड़ जाता है। माता अपने पुत्रकी रक्षाके लिये अग्निमें, जलमें, व्याघ्रके मुखमें, अपनी आहुति दे देती है। सच्चा मित्र अपने मित्रके लिए प्राण-विसर्जन कर देता है। संन्यासी अपने आदर्शके लिए सब प्रकारके कष्टोंका सामना करता है! तुम भी समस्त परीक्षाओंके लिये सन्नद्ध रहो। सारी कठिनाइयोंका सामना करते हुए परमात्माके नामपर साहसी और निर्भय बनो। तुम मेरे पुत्र हो। मृत्यु या जीवनमें, पाप या पुण्यमें, दुःख या सुखमें, बुरे या भलेमें, जहाँ तुम जाते हो, जहाँ रहते हो, मैं तुम्हारे साथ हूँ। मैं तुम्हारी रक्षा करता हूँ-मैं तुम्हें प्यार करता हूँ, क्योंकि मैं तुम्हारे साथ बँध गया हूँ। मेरा परमात्माके साथ प्रेम तुम्हारे साथ मुझे एक करता है। मैं तुम्हारी रक्षा करता हूँ। मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। मैं तुम्हारा आत्मा ही हूँ। तुम्हारा हृदय मेरा निवास-स्थान है।

'हरिः ॐ तत्सत्'

●

मैं प्रेम हूँ : 10 :

परमात्माकी वाणीकी प्रतिध्वनि आयी-'एक ऐसा प्रेम है, जो किसीसे भयभीत नहीं होता है-जो जीवनसे भी बहुत बड़ा है और मृत्युसे भी बहुत बड़ा है। वही प्रेम मैं हूँ। एक प्रेम ऐसा है, जिसकी कोई सीमा नहीं है-सर्वत्र है। जो मृत्युके समय भी रहता है-और अत्यन्त भयानक अवस्थामें भी रहता है। मैं वही हूँ एक ऐसा प्रेम, जिसका माधुर्य वर्णनातीत है। जो समस्त भयोंका स्वागत करता है, समस्त भयोंका अभिनन्दन करता है, जो निखिल उदासीनताको दूर कर देता है। उसे चाहे जहाँ ढूँढ़ो, वहीं मिलता है। मैं वही प्रेम हूँ। मैं उसी प्रेमका सार हूँ। ओ मेरे आत्मा! मैं वह प्रेम हूँ-जो तुम्हारा आत्मा है। मेरा स्वभाव प्रेम है। मैं प्रेमस्वरूप हूँ।'

प्रेम एक सौन्दर्य है जो सर्वज्ञानस्वरूप है। इसमें न तो किसी प्रकारकी असुन्दरता है, न निर्बलता। यह महान् है। यह आत्मिक है।

इस सौन्दर्यकी कोई सीमा नहीं है। यह आकाशके विस्तार तथा समुद्रकी गहराईके सदृश है।

यह सुगन्धित उषाकालमें तथा चमकते हुए सायंकालमें व्यक्त होता है। यह व्याघ्रोंकी गर्जना तथा चिड़ियोंके सङ्गीतमें प्रकट होता है। यह भयङ्कर आँधी तथा शान्तिके रूपमें प्रकाश पाता है और इनसे परे भी है। यही इसके दृश्य हैं। मैं वही सौन्दर्य हूँ।

एक सौन्दर्य है-जो आनन्द और दुःख दोनोंसे गहरा है। और यही आत्माका सौन्दर्य है। मैं वही सौन्दर्य हूँ। वही सौन्दर्य मैं हूँ। मैं समस्त आकर्षणोंका-चाहे उनका स्वभाव कैसा ही हो-केन्द्र हूँ। मैं चुम्बक हूँ। समस्त पदार्थ लोह-कण हैं। कुछ इस किनारे कुछ उस किनारे आकर्षित होते हैं। परन्तु सब बिना प्रतिबन्ध (अड़चन)के आकर्षित होते हैं। मैं वह चुम्बक हूँ। मैं वह सौन्दर्य हूँ। मैं वह आकर्षण हूँ। मेरा स्वभाव परमानन्द है।

एक जीवन है-जो प्रेम है, जो परमानन्द है, मैं वही जीवन हूँ। उस जीवनको कोई सीमित नहीं कर सकता। और यही अनन्त जीवन है। यही सनातन जीवन है और मैं वही जीवन हूँ। उसका स्वभाव शान्ति है। और मैं शान्ति हूँ। इसके सर्वव्यापक भावमें कोई विवाद नहीं है। इसमें आवागमन नहीं है।

इसके लिए 'निर्दय प्रबल' प्रयत्न आवश्यक नहीं है। इसको पैदा करनेके लिये कोई इच्छा नहीं। यह है ही। मैं ही वह जीवन हूँ। इसको सितारे या सूर्य अपनेमें नहीं रख सकते। कोई भी दूसरे प्रकाश इसकी समानता नहीं कर सकते। यह स्वयंप्रकाश है।

इस जीवनकी गहराई मापी नहीं जा सकती। इसकी उच्चताका कोई माप नहीं है। मैं वह जीवन हूँ। तुम मुझमें हो। मैं तुममें हूँ। निराधार होते हुए भी सबका आधार मैं ही हूँ। समस्त भौतिक रूपोंमें मैं आत्मा हूँ। मैं जीवनके रवमें, एकान्तमें, समयमें ओत-प्रोत हूँ। मैं नाम-रूपसे परे आत्मा हूँ। मैं मनसे रहित होता हुआ भी सर्वज्ञ हूँ। मैं रूपरहित होनेपर भी सर्वज्ञ हूँ। अपनेमें कुछ नहीं रखता हुआ भी सबमें हूँ। मैं

शक्ति हूँ। मैं शान्ति हूँ! मैं अनंत हूँ। मैं सनातन हूँ! मैं बहुत्वमें एक हूँ। समस्त जीवित पदार्थोंका सार हूँ। मैं समस्त अंशोंका सम्पूर्ण जीवन और मृत्युके तथा समस्त बन्धनोंके परे, अमर और अजन्मा रहता हूँ!....

जो मुझे जान लेता है, वह मुक्त हो जाता है। समस्त भ्रमोंके मध्यसे मैं सत्यको देखता हूँ। वह सत्य जो देखा जाता है, मैं ही हूँ! यह मायाविनी शक्ति, जो माताका स्वरूप है; उसका संचालक मैं ही हूँ। मैं समयके गर्भसे जन्म लेता हूँ! समस्त रूपोंमें ओतप्रोत रहता हूँ! मैं स्वयं समयका कारण हूँ, अतः अनन्त हूँ।

ओ जीवात्मन्! तू वह है जो मैं हूँ, अतः तू उठ! जाग और समस्त बंधनोंको तोड़ डाल! समस्त स्वप्नोंको मिटा दे! भ्रमके आधिपत्यको हटा दे। तू आत्मा है! आत्मा तू ही है। कोई पदार्थ तुझे स्वरूपानुभव करनेमें बाधक नहीं हो सकते। जाग! जाग!! मत रुक...जब तक वह लक्ष्य जो कि-आत्मा है-जीवन है-सनातन प्रेम है-सनातन आनन्द है-और मुक्त आत्माका ज्ञान है...प्राप्त न हो!

●

आचरण ही सर्वस्व है : 11 :

गुरुके शब्दोंमें मेरे आत्मासे कहा...वत्स! तुम्हारी श्रद्धा कहाँ है? क्या तुम पशु हो कि प्रत्येक विघ्नमें काँपते रहते हो। जब तक तुम अपनी देहात्मबुद्धिपर विजय नहीं प्राप्त करते, तबतक सत्यका अनुभव नहीं हो सकता। तब क्या तुम मृत शरीर हो? क्या तुम इस भौतिक मलके दल-दलमें सर्वदा नाचते रहोगे? अपनी इस हीनताको छोड़ो। मनुष्य बनो! यदि आत्मा छिपा रहता है, तो वह कहाँ है? क्या तुम इतने प्रसिद्ध हो कि संसारको आवश्यक हो? अपनी निश्चयात्मिका बुद्धिसे मनको वशमें करो। मुक्त हो जाओ, यदि तुम अविनाशीके लिये प्रयत्न करते हो, तो मृत्यु तुम्हारा स्पर्श तक नहीं कर सकती, क्योंकि तुम

मृत्युको ही भूल जाओगे। तुम अमर हो जाओगे। समस्त संसार सत्यका प्रकाश करनेके लिये प्रयत्न कर रहा है। इस प्रयत्नमें आरम्भिक सफलता आचरणके समझनेमें है। आचरण ही सर्वस्व है।

आचरण सुधारो-आचरण सुधारो। प्रत्येक क्षणमें आचरण बनाओ। अपने अन्तःकरणमें अमरताके आधारपर तुम अमर हो जाओगे। सत्यको निवासस्थान बनाओ! जन्म और जीवनके परिवर्तनशील अनुभव तुम्हारे लिये दुःखद न होंगे। शरीरको जाने दो। इसमें आसक्ति व्यर्थ है। मनसे अपनेको स्वतन्त्र बनाओ। समस्त धर्म और सदाचार-शास्त्रका सार पाशविक वृत्तिपर विजय पाना ही है। स्त्री, पुरुष, भाव, भय, निद्रा, भूख आदि वृत्तियोंको त्याग दो। इस शवसे आसक्ति मत करो। यह शरीर शव ही है। इसके साथ सदा ऐसा ही व्यवहार करो। इसके ऊपर सुनहला कपड़ा न डालो। यह मल है। केवल आत्मा ही सत्य है। आत्माका विचार अमरत्व है। अमरत्वका विचार करनेसे तुम सनातन तक पहुँच जाओगे। साहसी और निर्भीक बनो, बलशाली बनो। क्या तुम्हें आत्मानुभव की कामना है? यदि है तो मेरे पुत्र! शरीरकी चिन्ता करनेका समय नहीं है। अभी समय है। इसी समय तुम्हारा सौभाग्य है।

तुम सत्यताके पुत्र हो। तुम्हारा स्वरूप सत्य है। इसलिए आत्मिक जीवन-रूप जीवित जलमें गोते लगाओ। निर्भय रहो। जीवनके सुख और दुःखोंसे ऊपर उठना सीखो। स्मरण रखो कि तुम आत्मा हो! तुम्हीं आत्मा हो। अन्तरतम प्रदेशमें जाओ। अनुभव करो कि तुम बलवान हो। अपने स्वभावके मूलमें जाओ। वहाँ तुम्हें अनुभव होगा कि तुम अपने धार्मिक प्रयत्नमें सच्चे हो। यदि कुछ असफलता मिले तो कोई चिंता नहीं। भय और निर्बलता भौतिक हैं-यह जानो। ये दोनों शरीरसे, जो कि स्वप्नका घोंसला है, उत्पन्न होते हैं। तुम अपने तात्त्विक स्वभावमें मुक्त और निर्भय हो।

शक्तिका संगीत गाओ, वत्स! शक्तिका संगीत गाओ! तुम अमरत्वके पुत्र हो। तुम्हारा लक्ष्य सत्य है। तुम्हारे प्रतिदिनके क्षणिक

अनुभव महान् मृगतृष्णाके मिथ्या भ्रम हैं। इस जीवनको ईश्वराभिमुख करो अथवा निवृत्त हो जाओ! किसी भी साधनसे-ईश्वरका अनुभव करो! इसकी चिंता मत करो कि तुम किस मार्गसे जा रहे हो। चाहे प्रवृत्ति मार्ग हो या निवृत्तिमार्ग, दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है।'

मेरे अन्तःकरणमें शान्तिका भाव आया। एक महान् शांति पैदा हुई। उस शान्तिमें सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान् शक्तिका उदय हुआ। वह एक शक्ति थी जिसने मेरे आत्माको बल दिया।

इस विचारकी अवस्थामें गुरुदेवके शब्द सुनायी दिये-

'समयके परे और अन्दर मैं अनन्त हूँ! मूर्त्त हो या अमूर्त्त, सब कुछ आत्मा है। सबका अन्तर एक है। प्रचण्ड वायुके झकोरोंसे सतहपर चाहे जितनी बहुत्वकी तरंगें उठती हों पर भीतरी भागमें सत्यकी धारा सतत प्रवाहित हुआ करती है।

'तत्त्वमसि! तत्त्वमसि!!'

•

अभी और यहीं : 12 :

गुरुके शब्द ध्यानके समय कहते हैं-देखो, एक अंतर्जगत है और दूसरा वाह्य। एक आत्मिक है तो दूसरा भौतिक। वत्स! यदि वाह्यजगत्में आश्चर्य, रहस्य, विस्तृत सौन्दर्य और महान् यश हैं तो अंतर्जगतमें भी अतुलनीय महत्ता, शक्ति, अनिर्वचनीय आनन्द, शांति और सत्यका मूल है। वाह्यजगत् अंतर्जगत्का भौतिक रूप है। इस अंतर्जगत्में ही तुम्हारा वास्तविक स्वभाव निहित है। यहाँ ही तुम्हारी स्थिति अनंतमें है। वाह्यजगत् तो केवल समयका है। अंतर्जगत्में अपरिमित और अतुलनीय आनंद है। वाह्यजगतमें विषय-सुख दुःख-मिश्रित है। अंतर्जगत्में भी दुःख है, परन्तु है वह आनन्दमय। वह वाह्य-विस्मृतिसे युक्त, उद्वेगके रूपमें सत्यको पूर्णतया अनुभव करने पर होता है। यह अधिक शांति ढूँढ़नेका मार्ग है।

आओ! अपने स्वभावको इस अंतर्जगतमें खींचो। मेरे लिये उत्सुक प्रेमके पंख पर आओ। क्या गुरु और शिष्यके सम्बन्धसे भी बड़ा और घनिष्ट कोई सम्बन्ध हो सकता है? वत्स! प्रेमका स्वरूप मौन है। अंतरतम प्रदेशके भी अन्तरमें ईश्वर है। समस्त बाह्य सम्बन्ध त्याग दो। मैं जहाँ भी जाऊँ वहीं तुम भी आओ। जो मैं हूँ वही-वही तुम भी बनो। परमात्माकी पवित्रताके लिये बहुतसे भक्तोंके हृदय-मन्दिरमें सद्विचाररूप गुगुल-सुगन्ध उठते हैं। जो कुछ भी करो धर्म-बुद्धि (ईश्वरार्पण)से ही करो। परमात्माको मूर्त्त और अमूर्त्त दोनोंमें देखो। परमात्माके अतिरिक्त दूसरा कोई कल्याण नहीं है।

अंतर्जगत्के अंतरतम शून्य प्रदेशमें, जहाँ साधक उत्सुक प्रेम या उत्सुक प्रार्थनाके द्वारा पहुँचता है, एकके बाद दूसरे जगत् प्रकट हुआ करते हैं। सर्वदा परमात्मा उसके समीप रहता है। वह भौतिक भावमें नहीं, बल्कि धार्मिक भावमें स्वयं तुम्हारे आत्माके रूपमें निकट रहता है। वह आत्माका सार है; तुम्हारे समस्त विचारों तथा हृदयके गुप्त और एकान्त संकल्पोंका ज्ञाता है।

अपनेको समर्पित कर दो। केवल प्रेमके लिये प्रेम और कर्मके लिये कर्म करो। एकान्तकी कोठरीमें जाओ। सत्यके सामने आओ। जितना ही अधिक अन्तरमें जाते हो उतना ही मेरे समीप आते हो, क्योंकि मैं तुम्हारे अन्तः-करणके गुप्त रहस्य तथा महत्त्वको आकर्षित करनेवाला चुम्बक हूँ। मैं नाम रूपके स्पर्शसे रहित आत्मा हूँ। मैं अविनाशी हूँ। मैं परमात्मा हूँ। मैं ब्रह्म हूँ। मैं ही राम हूँ।

मेरे अन्तःकरणसे भाव उठता है-'हे आनन्दमय! आप स्वयं परमात्मा है। आप जो उपदेश देते हैं-वही आप हैं। आप संसारके सार हैं। आप ही सर्वस्व हैं। आपका स्वभाव एक है, यद्यपि आपकी माया अनेकका रूप दिखलाती है। उस एकका महान् यश आपका ही है। क्योंकि आत्मा एक ही है। आत्मा उस तत्त्वका सार है, जिसका कोई अंश सम्भव नहीं है। आत्मा एक ही प्रकाश है जो अनेक रङ्गके शीशों द्वारा देखा जाता है।

हे गुरो! हे गुरो! मुझे उस जीवनमें उठा लो–जो आपका है। आप ब्रह्मा हैं। आप विष्णु हैं आप सदाशिव हैं। आप ब्रह्म हैं। आप परब्रह्म हैं। (हर हर महादेव) आप श्रीराम हैं।'

तब मेरा आत्मा ऊपर उठा लिया गया। ऐसा प्रतीत हुआ जैसे सातवें स्वर्गमें चला गया हो। मैंने मनुष्यत्वका सार देखा। मनुष्यकी कमजोरियोंका महत्त्व देखा। सब कुछ आत्मिक था। उस अंतर्जगत्के उज्ज्वल प्रकाशमें अनुभवकी शिलापर गुरुदेव श्रीकृष्णका रूप धारण कर विराजमान हुए। ध्यानका वह अंतर्जगत् कालसे भी गहरा, देशसे भी विस्तीर्ण है। वहाँ अन्धकार नहीं है। सभी प्रकाश है। वहाँ अविद्याका लेश भी नहीं है, क्योंकि सब ज्ञान है। वहाँ मृत्युकी गति नहीं है। अग्नि जला नहीं सकती। पानी भिगो नहीं सकता। हवा सुखा नहीं सकती। जीवनके समस्त असत्यों (भ्रमों)के परे वह पुरातनका देश है। वहाँ अनन्त अटल है।

अंतरतम प्रदेशके महत्त्वमें गुरुदेव कहते हैं–वत्स! तुम्हारा अधिकार जन्मसिद्ध है। तुम्हारी शक्ति अनन्त है। तब क्या तुम निर्बल हो सकते हो, जब कि अनंत शक्ति तुम्हारी है? तुम इन्द्रियोंकी बाहरी चमक-दमकसे संतुष्ट नहीं रह सकते। इस बहिर्जगत्के पीछे मृत्यु और विस्मरण लगे हुए हैं। जब मृत्यु पकड़ लेती है, यह शरीर शव हो जाता है। परन्तु आत्मा तो सर्वदा स्वतन्त्र है। यह अमूर्त्त है। यह साक्षी है–क्योंकि शरीरका नाश हो जानेपर भी यह अविनाशी रहता है।

मेरा आत्मा गुरुसे मिलकर कहता है–"स्वामिन्! कैसा आश्चर्य है? मृत्युका अस्तित्व ही नहीं है।"

गुरुने उत्तर दिया–"इन्द्रियपरायण जीवनका भी, जिसका मूल वासनामें है, अस्तित्व नहीं है। जो उसके लिये प्रयत्न करते हैं उनके लिये वह (जीवन) एक कीचड़भरा गर्त है। जैसे कीचड़में खेलता हुआ बैल उसीसे लथपथ हो जाता है–वैसी ही गति काममें आनन्द माननेवाले जीवोंकी होती है। अनेक प्रकारकी वासनाओंसे ओत-प्रोत मायाद्वारा बाधित उनका मार्ग बहुत लम्बा है।

इनके परे जाओ। तुम्हारा समय आयेगा। ऊपर देखो। वहाँ अनन्त प्रकाश है। ऊपर देखो, वे तुम्हारी अविद्या छिन्न-भिन्न करेंगे।"

यह उपदेश सुनकर मुझे स्मरण हो आया। आत्माका स्वभाव दैवी है। मुक्ति लक्ष्य है। लक्ष्य अभी और यहीं है, इसके पश्चात् नहीं। उस महत्ताके अनुभवके लिये, कालको मिटानेके लिये, इन्द्रियोंकी छायाको मिटानेके लिये, जीवका लक्ष्य आत्मानुभव निश्चित है। तब काल मिट जाता है, भौतिक और नश्वर विचार अलग हो जाते हैं। प्रकाश जो कि जीवन है, सत्य जो कि शांत है–चमक उठता है। समस्त स्वप्न समाप्त हो जाते हैं। अनन्त अनुभवमें आत्मा एक हो जाता है।

हरिः ॐ तत्सत्।

•

केवल प्रकाश : 13 :

वह शब्द जो मौनमें रहता है मेरे आत्मासे कहता है–"वत्स! गहरी शान्तिमें आओ। व्यक्तित्वके कोलाहल और इसके नाना अनुभवोंके परे तुम महान् शान्तिमें आओ। सतह परकी कामवायु तथा वासनाओंसे न घबराओ। यद्यपि घने बादल घेर लेते हैं, फिर भी उनके परे सूर्य चमकता रहता है। उस मौनमें हृदय आनन्द विभोर हो जाता है। उस प्रेमके सामने, जो सर्वत्र व्याप्त है, अपना हृदय खोल दो। मौन संगीतमय है। यह अनिर्वचनीय शान्तिका स्रोत है। इस अनन्तमें एक भी सद्विचार, एक भी धार्मिक सदाकांक्षा विफल नहीं होती। इसलिए समयके परे जाओ। उसमें तुम्हारा चिन्तन महान् होगा। तुम्हारा मन अनंतका जिज्ञासु हो सकेगा। तुम्हारे चित्तमें ही तो संसारका अस्तित्व है। तुम समयके अन्दर ही अनन्तका प्रकाश कर सकते हो। अपने विचारोंके द्वारा तुम अनन्तधाम तक पहुँच सकते हो। इस ज्ञानसे कि आत्मा मुक्त और स्वतंत्र है, कितनी शक्ति, कितना उच्च विचार उस महान्‌का अतुलनीय अनुभव होनेपर होते हैं।

जाना-आना, करना-न-करना-यह सब क्या है? जीवनके घोर स्वप्नकी उपकथाएँ हैं। समय-नदीके स्रोतमें वे निम्न धाराएँ हैं। परन्तु आत्मा अनन्त है। मौन अत्यन्त गहरा है। शान्ति अपरिमित है। भाव और विचारके प्रतिबिम्बको मिटा दो। उनके स्वरूप पानीके अन्दर पड़ती हुई छायाकी भाँति भ्रामक हैं। स्वयंप्रकाशमें जाओ।

शब्दने दुबारा कहा-"आत्मामें अहङ्कारका भाव नहीं है। यह अपरिमित, सनातन सदास्वतन्त्र, एक है-जिसमें किसी प्रकारका विभाग नहीं है। आत्मराज्यमें तू-मैं और वहके लिये स्थान नहीं। समस्त वही है। ॐ तत्सत्। अनुपम और अनिर्वचनीय उस आत्माको कौन जानता है? वस्तुतः वही जानता है।

सच्चा प्रेम मुक्तिकी-तथा अनन्तमें विलीन हो जानेकी तीव्र लगनमें निहित है। सच्चा प्रेम तो मौनके लिये तीव्र आकांक्षामें निहित है। इसमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं है। यह धीरे-धीरे परन्तु बहुत व्यापकताके साथ गन्तव्य तक पहुँचती है। यह अबाध्य है। लक्ष्यको प्राप्त करती है। जहाँ सब देवगण मिल जाते हैं, जहाँ समस्त शब्द नष्ट हो जाते हैं, जहाँ रूप निगल लिया जाता है; जहाँ जीवन और मृत्युका अस्तित्व मिट जाता है; वही आत्मा है। जहाँ प्रयत्न बन्द हो जाता है; जहाँ अनुभव रहता है; जहाँ समस्त अन्योन्याश्रित वस्तुएँ नष्ट हो जाती हैं; वहाँ सौन्दर्य, पवित्रता, पाप-भय और भले-बुरेमें भेद नहीं रहता। जहाँ मन गहरे ध्यानमें सर्वज्ञ हो जाता है उसको तुम आत्मा जानो। वत्स! उन्नतोंसे भी उन्नत और समस्त देवोंसे भी परे वह आत्म-तत्त्व है।

वह अविनाशीका विश्राम-स्थान है। सब कुछ मिट जाता है। सब नष्ट हो जाता है। जो रहता है-वह आत्मा है। जब शब्द मौन हो गया तो ऐसा प्रतीत हुआ मानो मेरी आत्म-सत्ता 'ईश्वर'से एक हो गयी। तब मैं नहीं था, केवल प्रकाश शेष रहा।'

●

आत्माकी वाणी : 14 :

जब आत्मा अन्तर्देशके एकान्तमें पहुँचता है तब ये शब्द सुन पड़ते हैं-पाप और बुराईसे भलाई गहरेमें रहती है। संसारका आधार तथा आवश्यक तत्त्व अतुलनीय और अनन्त भलाई ही है। जहाँ ईश्वर है वहाँ बुराई नहीं है। बुराई केवल भौतिक है। वस्तुतः इसका अस्तित्व नहीं है। बहुत गहरेमें, अन्तःकरणके समुद्रमें, सत्य और बुद्धिमत्ताके अचल पर्वत हैं। इनके सामने त्रुटियाँ, अंधकार और समस्त बुराइयाँ नष्ट हो जाती हैं। सत्य है, सतह पर वासनावायुके घोर शब्द हों; उबलते हुए कामकी प्रचण्ड आँधी हो, बुराई और अन्धकारका समय हो; परन्तु एक क्षणका अनुभव सर्वशक्तिमान् है। वह उठती हुई प्रबलसे प्रबल बुराईको नष्ट कर देता है। यह अन्धकारके नाशक सूर्यके सदृश है।

अतः अंधकारमें भी तू उस प्रकाशको याद रख। पाप करते समय भी तू उस परमात्माके नामको पुकार। वह परमात्मा तेरी प्रार्थना सुनेगा। वह तेरी सहायताके लिये अपने दूत भेजेगा। आत्म-बलसे बड़ा कोई बल नहीं है। सनातन आत्मतत्त्वकी धारा अंतर्देशकी अत्यन्त गहराईमें प्रवाहित है। उसकी एक झाँकी समस्त वैषम्यको-जिसके अन्दर पाप और अविद्याका निवास है-नष्ट कर देती है। वस्तुतः तू शुद्ध है। तू मुक्त है। तू आत्मा है। संसारकी समस्त शक्तियाँ तेरे पीछे हैं, तू उनको पुकार।

यदि तू मुक्त है तो क्या मुक्तिके लिये प्रयत्न करेगा? आत्मज्ञानकी प्राप्ति तेरा लक्ष्य होना चाहिए! उस आनन्दमय दृश्यकी दीपशिखाका एक भी अंश बुराईके सूक्ष्मतम संस्कारको भी पूर्णतया नष्ट कर देता है। जान कि तू अनन्तकी शक्ति और प्रकाशसे है। तेरा जीवन न यहाँ है न वहाँ! यह अनन्तमें स्थित है। ये पापके समस्त भाव अविद्यासे हैं। यह स्वप्न है। पापका स्वभाव कमजोरी है। बलवान् बन! उसकी एक झाँकी जो तू ही है और तू वही है, सर्वशक्तिमान् तथा सर्वप्रकाशमान है।

तब मैंने प्रार्थनामें कहते हुए शब्द सुने-"हे इन्द्रिय तथा विचारके डेरे (शरीर)को बनानेवाले! इसको नष्ट कर दो।"

भय, स्त्री-पुरुष-भाव, भोजन, निद्रा तथा इनसे पैदा हुए भावोंसे बद्ध तूने मानो अपनेको अविद्याके घनिष्ट बन्धनसे स्वयं बाँध रखा है। और निरन्तर स्वप्न देखता जा रहा है। तेरा दुःख स्वयं अविद्या है। तोड़ दे समस्त स्वप्नोंको! नष्ट कर दे सुख-दुःखके भावोंको! देह-बुद्धिरूप लौह-शृङ्खला टूट जायगी। तेरे सम्मुख महान् कर्तव्य है। मायाका जाल मकड़ीके जाल-सा पतला परन्तु पर्वत-सा कठोर है! ओ आत्मन्! तू अपनी मुक्तिके लिये आ! यह क्षणिक निवासस्थान जिसे तूने बनाया है-तुझे नष्ट करना होगा! इस नाशका साधन तेरा आत्मानुभव है। इसमें कैवल्यका आत्मिक ज्ञान निहित है। क्या सूर्य-तारे, या सारे देश तुझे अपनेमें रख सकते हैं? आत्मा तुझसे संयुक्त है; एक है। अन्धकारके परे, अविद्याके परे ओ आत्मन्! यह सब मनका कार्य है!

सुखसे दुःख अच्छा है। सम्पत्तिसे विपत्ति अच्छी है। क्योंकि ये भाव और विचारको आत्माके साक्षात्कारके लिये उचित चक्रनेमिके रूपमें ढाल देते हैं! तू रौद्ररूपका उपासक बन। ओ आत्मन्! तू रौद्ररूपमें मृत्युको देखेगा। वस्तुतः तू अमृतत्त्वको भी देखेगा। वस्तुतः जीवन एक स्वप्न है। इसके परे परमात्मा है। अन्तमें सर्वत्र एकत्व है जो आत्मिक तथा सर्वव्यापक है। सूर्य एक होता है चाहे उसकी रश्मियाँ अनेक हों। सूर्य रश्मि है; रश्मि सूर्य है। और अन्धकारमें भी प्रकाश है।"

इसको सुनकर मनने ध्यानकी अधिक गहरी अवस्थामें प्रवेश किया और मुझे मालूम हुआ कि वस्तुतः रश्मि ही सूर्य है।

फिर ध्यानकी अवस्थामें कोई अव्यक्त पुरुष यह कहते हुए आया कि तुम्हारा स्वरूप मौनमें-शब्दोंके अत्यन्त परे, अनन्त शान्तिमें रहता है। इन्द्रियजन्य चाञ्चल्यके परे, जीवनके सब दुःखोंके परे, दुःख और पापके भावोंके परे, उनके अन्दर भी आत्मतत्त्व है।

इस स्वप्नकी बनावट भी कैसी आश्चर्यजनक है! स्वप्न

देखनेवाला स्वप्नसे अधिक आश्चर्यजनक है। हे जीवात्मन् तुम्हारा मूल आत्मतत्त्वमें है और तुम समस्त बुराइयोंसे घिरे रहनेपर भी निष्कलङ्क हो, अमर हो, मृत्युकी सीमाके बाहर हो। अच्छा और बुरा-ये विचारके मापसे सम्बद्ध हैं। तुम समस्त विचारोंसे परे परम प्रकाशमान और महान् हो। तुम्हारा स्वभाव समस्त वस्तुओंके परे है। शब्दोंके परे तुम अनुपमेय हो। हे परम प्रकाशमान दिव्य तथा अलौकिक! ध्यान तथा आत्मानुभवके विशाल शृंगपर स्थित तुम्हें कौन पापी या महात्मा कह सकता है? तुम्हारे बारेमें कौन कह तथा विचार सकता है?

सबमें एक तथा वही अमर आत्मन्! तुम्हारे सम्बन्धमें अनित्य जीवनके शब्दोंमें कोई क्या कह सकता है? तुम इन्द्रियातीत हो; अमर हो। आँधीकी भाँति उठते हुए विचारोंमें भी जानो कि समस्त पदार्थोंका शान्त निरीक्षक स्थित है। उसके प्रकाशको इन्द्रियाँ नहीं छिपा सकतीं और न तो उसकी शान्तिको जीवनके कुतूहल ही मिटा सकते हैं।

सूर्य, चन्द्रमा तथा तारोंके परे वह अचल अचिन्त्य है। वह आत्मा है। आत्मा ही वह है। इन्द्रिय सम्बन्धी संग्रामका वह विजेता है। अज्ञान चाहे पर्वतकी ऊँचाईके सदृश हो; पाप और दुःख चाहे समुद्रवत् गहरे हों; परन्तु वह सबको घेरे हुए है। वह सर्वस्व है, एक है, तथा प्रकाशस्वरूप है; इसको जानो और स्वतन्त्र होओ! स्वतन्त्र होओ!

और मुझ तक ये शब्द आये-"मैं सर्वदा तेरे समीप हूँ। जब पाप अधिक बढ़ जाते हैं और घोर अन्धकारमें तू उद्योग करता है तब जान कि वहाँ मैं भी तेरे साथ ही पापोंके आधिक्यमें कष्ट उठाता हूँ। मैं तेरे अन्तःकरणके अन्तरतम भावोंसे परिचित हूँ। क्योंकि मैं तेरे हृदयके भीतरके सब कार्योंको जानता हूँ। तू अपने हृदयके गुप्त भावोंका एक सूक्ष्म अंश भी मुझसे नहीं छिपा सकता क्योंकि मैं अन्तर्यामी हूँ। मैं तुझमें हूँ। मैं तुझे भलीभाँति जानता हूँ। मेरे बिना न तू हिल सकता है, न तो श्वास ले सकता है! मैं तेरा आत्मा हूँ-यह स्मरण रख! जहाँ तू जाता है और रहता है, वहीं मुझे भी जान। आ अपने हृदयको मुझमें खोल। इसे तू अपना बना।

तब सब कल्याण होगा। छाया और शान्ति-इन्हींमें मैं रहता हूँ। तेरे हृदयके अन्दर भी मैं रहता हूँ। अब जा तू, संसारमें जा और मेरे शब्दोंका उपदेश इतने विस्तारके साथ कर जितना कि विस्तृत तेरा आत्मा है। क्योंकि यही उसका जीवन है। मेरे शुभाशीर्वाद तथा सर्वव्यापी प्रेम तुझे प्राप्त हों। तेरे प्रति मेरा प्रेम मातृवत् है। जैसा प्रेम कबूतरका अपने बच्चेके प्रति होता है वैसा ही तेरे प्रति मेरा है। जब दुःख आक्रमण करते हैं; भय धमकाते हैं; तब स्मरण रख, मैं तेरा सहायक हूँ; मैं तेरे आत्माका प्रेमी हूँ।

जब ये शब्द समाप्त हुए तब मुझे ज्ञात हुआ कि मेरे समस्त पापोंको धोते हुए गुरुने कहा है। मैं उच्च स्वरसे कह उठा-"अहा! अत्यन्त आनन्द!! मैं अपने स्वामीके सम्मुख रहकर जानता हूँ। उसमें एक हो ! उसमें एक हो।" इन आत्मिक भावोंका प्रवाह कितना मधुर है। सन्त-सा उच्च स्वरमें अपने मनसे कह उठा....मूर्ख! परमात्म-स्वरूप सिन्धुमें गोते लगा; परमात्मारूप सिन्धुमें गोते लगा!

•

मूल्याङ्कन : 14 :

ध्यानकी शान्तिमें-पहुँचने पर आत्माको गुरुके ये शब्द सुनायी दिये-'वत्स! क्या तुम्हारी सारी कमजोरियोंको मैं नहीं जानता हूँ? तब चिन्ता क्यों करते हो? क्या जीवन परीक्षाओं तथा दुःखोंसे पूर्ण नहीं है? तुम तो मनुष्य हो। अपने अन्तःकरणको उत्साहशून्य मत होने दो। स्मरण रखो कि तुम्हारे अन्दर परम आत्मा है। तुम जिसे चाहते हो उसे प्राप्त कर सकते हो। केवल एक ही बाधा है-अहंकार। तुम्हारा शरीर प्रतिकूल युद्ध करता है। मन चंचल रहता है, परन्तु लक्ष्यके लिये विश्वास करो; क्योंकि अन्तमें आत्माकी शक्तिको कोई रोक नहीं सकता। यदि तुम अपने अन्तःकरणमें सच्चे निश्चयवाले हो-यदि तुम्हारे हृदयकी गहराईमें सचाई है तो सब कल्याण है। कोई वस्तु तुमपर

पूर्णतया अंत तक अधिकार कर नहीं सकती। अपने हृदय और मनको खोलनेका स्वभाव डालो।

मुझसे अपने सम्बन्धकी कोई बात न छिपाओ। अपने मनका निरीक्षण करो–मानो यह तुमसे कोई भिन्न वस्तु है। अपने सम्बन्धमें उनसे स्पष्ट कहो, जिनसे तुम्हारा सच्चा सम्बन्ध है। क्योंकि नरकके फाटक भी सच्चे हृदयवाले पुरुषके सम्मुख नहीं खड़े रह सकते। सत्य ही एक आवश्यक वस्तु है।

वस्तुतः तुम्हारी सभी त्रुटियाँ देहबुद्धिसे उत्पन्न होती हैं। अपने शरीरके साथ इस प्रकारका व्यवहार करो जैसे यह मिट्टीका एक टुकड़ा है। इसे अपनी शुभेच्छाओंकी पूर्तिका साधन बनाओ। आचरण ही सब कुछ है। आचरणकी शक्ति ही शुभेच्छाकी शक्ति है। यहीं धार्मिक जीवनका एक मात्र रहस्य है। यही धार्मिक प्रयत्नका सम्पूर्ण अर्थ है। सभ्यताओंको देखो। मनुष्य किस प्रकार इन्द्रियबल तथा इन्द्रिय सम्बन्धी पदार्थोंमें अपनी प्रशंसा समझता है; किन्तु इन सबके अन्तरमें केवल रसनेन्द्रिय तथा जननेन्द्रिय सम्बन्धी भाव हैं। अधिकांश मनुष्योंका मन इन्हीं दो भावोंसे बना है।

हम लोग इस शवको पुष्पोंसे ढँक देते हैं–पर वस्तुतः यह शव ही रहता है। अतः धार्मिक जिज्ञासुको चाहिए कि वह उन पदार्थोंका जिन्हें संसार बड़ा कहता है अत्यन्त गम्भीरताके साथ विश्लेषण करे। सूक्ष्म रीतिसे विचार करनेपर उनका परदा खुल जाता है और वे भौतिक हो जाते हैं। इन क्षणभंगुर संसारी वस्तुओंसे तथा इनके आकर्षणसे कोई सम्बन्ध मत रखो। उन परदोंको फाड़ डालो, जिससे यह शरीर अपनी लज्जा छिपाता है। उस अंतर्दृष्टिमें जाओ जहाँ अनुभव कहता है कि तुम इन पदार्थोंके नहीं हो। तुम आत्मा हो। राज्योंका उत्थान, अधःपतन, सभ्यता और कला–कौशलकी उन्नति तथा अवनतिका मूल्य उच्चतम धार्मिक जागृतिके सामने कुछ नहीं है, यह जानो।

जो अव्यक्त है वास्तवमें वही महान् है! वस्तुतः वही आकांक्षणीय है–यह जानो! दरिद्रताके जिज्ञासु बनो। पवित्रताके

लिये तीव्र आतुर होओ। कामिनी-कञ्चनसे ही संसारी भाव उत्पन्न होते हैं।

अपने स्वभावसे इनका समूल उन्मूलन कर दो। संबंधकी समस्त वृत्तियाँ विषरूप हैं। अपने स्वभावसे सम्पूर्ण मलिनताको निकाल दो। अपने अन्तःकरणसे समस्त अपवित्राओंको धोकर शुद्ध कर दो। जीवनके वास्तविक स्वरूपको देखो तब जानोगे कि यह केवल माया है। न तो कुछ अच्छा है और न बुरा, बल्कि कुछ ऐसा है कि जो सर्वथा त्याज्य है। क्योंकि इसका सम्बन्ध शरीर तथा देह-बुद्धिसे है। अपने ऊँचे स्वभावसे प्राप्त सब भावोंको एकाग्रतासे सुनो। आत्माके प्रत्येक संदेशको आतुरताके साथ ग्रहण करो। ऐसा धार्मिक सौभाग्य दुर्लभ है।

जब शब्द शांतिमें प्रवेश करता है-उस समय यदि सावधान न रहे, विषयोंका चिन्तन करते रहे, तो उसे न सुन पाओगे। तुम्हारा व्यक्तित्व ऐसी कुटेवोंके वश हो जायगा जिनसे तुम्हारा नाश हो जायगा। तुम्हारे लिये मेरा एक संदेश है-तुम आत्मा हो। अनन्त शक्ति तुम्हारे पीछे है। सच्चा होना ही मुक्त होना है।

तुम्हारा प्रत्येक पग आगे ही पड़े। जीवनके मार्गमें अग्रसर होनेपर तुम अधिकाधिक अनुभव करोगे कि तुम मुक्त हो। यदि तुम्हारा आधार सत्य है, तो तुम सबका सामना कर सकते हो। अपने अन्तःकरणमें सच्चे बनो। तब तुम्हारी वाणी सत्य होगी और अनुभव पूर्ण होगा। तुम ऐसी शक्ति प्राप्त करोगे जो दूसरोंको भी पूर्ण बना देगी।

प्रत्येक मनुष्य अपनी शक्तियोंकी तन्मात्रा छोड़ता है। कोई अपनेको गुप्त नहीं रख सकता। यदि किसी मनुष्यमें कोई शारीरिक त्रुटि है तो सब लोग उसे देखते हैं। वैसे ही यदि तुममें कोई आध्यात्मिक त्रुटि है तो स्वयं सब लोग जान जायँगे। क्योंकि जब तुम आत्मा सम्बन्धी पदार्थोंके बारेमें कुछ कहोगे तो लोग जान जायँगे कि तुम वह कह रहे हो जो तुम्हारे हृदयमें नहीं है। आध्यात्मिक जीवनका कोई तत्त्व उन तक पहुँचानेमें तुम असमर्थ होगे। क्योंकि तुम स्वयं उससे

अपरिचित हो। अतः यदि तुम उच्चकोटिके ईश्वर-दूत भी हो जाओ तो भी अपनेको आत्मसुधारमें तत्पर रखो।

अपने स्वभावका निरीक्षण करो। अपनी सम्पूर्ण वृत्तियोंकी निगरानी करो। अपने संस्कारोंको धार्मिक रूप दो। सच्चे बनो! अपने अनुभवको गुप्त रखो। अपने मोती सूकरके आगे मत डालो। यदि आत्मामें आश्चर्यजनक दशाका अनुभव करना है, तो मौन रहो।

तुम्हें जो मिलता है, उसपर बार-बार विचार करो। आत्माके एकान्तमें सब वस्तुओंके साथ व्यवहार करो। अपने ज्ञान तथा अनुभवकी इस प्रकार रक्षा करो जैसे चोर अपने धनकी रक्षा करता है। अपनेको सुरक्षित रखना चाहिए। जब कुछ समयके लिये मौनका अभ्यास कर लोगे, तो वह-जिससे तुम्हारा हृदय परिपूर्ण हो गया है, बह निकलेगा और तुम लोगोंके लिये कोष तथा महान् शक्ति हो जाओगे।

तपस्याका एक मार्ग है, जिसका मैं तुम्हें उपदेश करता हूँ। परमात्माके रौद्ररूपका ध्यान करो, क्योंकि रौद्ररूप सर्वत्र है। एक महात्मा द्वारा यह ठीक ही कहा गया है कि प्रत्येक स्पर्श की जानेवाली वस्तु दुःख है। इसको कृत्रिम भावमें नहीं; बल्कि तात्त्विक भावमें जानो! आत्मा सम्बन्धी समस्त अनुभवोंमें किसी-न-किसी रूपमें तुम्हें रौद्ररूपकी उपासना मिलेगी। वस्तुतः यह रौद्ररूपकी उपासना नहीं है। यह रौद्ररूप केवल उनके लिये हैं-जो इन्द्रियोंमें रहते हैं। हर्षवर्द्धक और भयानक शब्द केवल उनके लिये ही सार्थक हैं, जो देहबुद्धिके पक्के दास हैं; परन्तु यदि अनुभवमें नहीं तो कम-से-कम विचारों और सङ्कल्पोंमें तो तुम इसके परे गये ही हो। रौद्ररूपके ध्यानसे इन्द्रिय सम्बन्धी कामनाओं पर अवश्य ही विजय पाओगे। आत्मिक जीवनका आलिङ्गन करोगे। शुद्ध और मुक्त हो जाओगे। इस प्रकार तुम मुझसे जो कि जीवनके उस पार है-अधिकाधिक अभिन्नताको प्राप्त होगे। जीवनको भौतिक दृष्टिसे मत देखो।

मानसिक दृष्टिसे इसका अध्ययन करो, धार्मिक भावसे इसका

अनुभव करो। तब शीघ्र ही धार्मिक जीवनका रहस्य तुम्हें स्पष्ट हो जायगा। तुम जानोगे कि महात्मागण पवित्रता और दरिद्रतासे क्यों प्रेम करते हैं। क्यों किसी भी पदार्थसे जिसका सम्बन्ध कामिनी और कञ्चनसे है, चेष्टा करके या उससे परोक्ष होकर परहेज करते हैं। जो कुछ मैंने कहा है, उसका अनुकरण करो। जब तक ये तुम्हारे रग-रगमें व्याप्त न हो जायँ; इन भावोंका ज्वर, इनकी महत्ता तथा इनके आनन्द तुम्हारे रोम-रोममें प्रवाहित न हो जायँ, और तुम्हारे व्यक्तित्वको नये साँचेमें ढालकर पूर्ण न बना दें; तब तक तुम उपर्युक्त इन भावोंका निरंतर मनन किया करो।

•

टेढ़े मार्ग सीधे हो जायँगे : 16 :

जब सर्वथा एकान्त था, ध्यानकी गाढ़तामें गुरु प्रकट हुए और बोले-वत्स! उस शक्तिका-जो माताका भौतिक स्वरूप है-ध्यान करो। तब उस शक्तिसे उत्पन्न समस्त भयोंका अतिक्रमण करते हुए तुम उस शक्ति परेके माताके आत्मामें, जो कि शान्ति है, प्रवेश कर जायगा। जीवनकी अनिश्चिततासे भयभीत मत हो। यह स्मरण रखो कि यद्यपि रुद्रके समस्तरूप सहस्र गुना बढ़ते हुए प्रतीत होते हैं, फिर भी इनका प्रभाव केवल भौतिक शरीर पर होगा, आत्मा पर नहीं।

आत्मा अविनाशी है, इसलिए हर समय दृढ़ निश्चयी तथा उद्यमी रहो। परमात्माके आधार पर स्थित होओ। उस सत्यके अतिरिक्त, जो सब प्राणियोंमें समान है, किसीमें विश्वास न करो। तभी तुम विषयोंकी भयङ्कर आँधी तथा प्रलोभनमें शान्त-चित्त रहोगे। वह जो कि आता और जाता है-आत्मा नहीं है-तुम अपनेको आत्मा जानो न कि शरीरको। अनित्यता समस्त पदार्थोंमें-दृश्य जगत् में व्याप्त है। नित्यता केवल उस सनातन द्रष्टाके देशमें है जहाँ देश-कालसे अतीत आत्मतत्त्वका राज्य है।

वह सत्य समुद्रकी भाँति अगम है। कोई पदार्थ उसे सीमित नहीं कर सकता। जीवनके सत्य उस आत्मतत्त्वके अनन्त सिंधुके लिए लागू नहीं है जो कि उच्चतम अनुभवके शिखरपर अन्तःकरणमें आत्माके रूपमें हिलोरे लेता है।

संसारका दुःख ठीक उनकी वासनाओंके अनुपातसे है। अतः किसी पदार्थके लिए अन्धासक्ति मत रखो। किसीसे अपनेको मत बाँधो। उन्नत होनेकी इच्छा करो। पदार्थोंके संग्रहकी इच्छा मत करो। क्या संसारी पदार्थ तुम्हारे वास्तविक स्वभावकी तृप्ति कर सकेंगे? क्या तुम उनसे बाँधे जा सकते हो? मानव इस संसारमें नङ्गा आता है और आज्ञा आने पर नङ्गा ही जाता है। तब तुम कैसे मिथ्याभिमान करोगे? तुम्हारे पास धनकी वह अनंत राशि हो जिसका कभी नाश नहीं होता। अन्तर्दृष्टिकी वृद्धि ही इसका फल है। जितना अधिक तुम अपने स्वभावको पूर्ण बनाओगे उतना ही अधिक निश्चयके साथ उस सनातन धनको उपार्जित करोगे, जिसके द्वारा कुछ समयमें आत्मराज्यको खरीदोगे।

इसी क्षणसे अपने भीतर उन्नति करो न कि बाहर अनुभवकी गति बदल दो। इन्द्रियपरायण जीवनसे मुख मोड़ लो। सब पदार्थोंको भगवद् रूप दे दो। शरीरको आत्माका क्षणिक वासस्थान बनाओ। प्रतिदिन आत्माको अधिकाधिक प्रकाशमें आने दो। तभी अज्ञानान्धकार दूर होगा और आत्मज्ञानके प्रकाशका धीरे-धीरे प्रत्यक्ष होगा। संसारकी समस्त शक्तियाँ तुम्हारे पीछे हैं। तुम यदि केवल सत्यकी ओर अग्रसर हो रहे हो तो वे सब तुम्हारे अभ्युदयके लिए तुम्हारे साथ कार्य कर रही हैं। तुम्हें स्वयं प्रयत्न करना चाहिए। गुरु तो केवल ज्ञान दे सकते हैं, शिष्यको उसे धारण करना पड़ता है। यह धारण करना ही आचरण बनाना है। यही ज्ञानको अपनाना है। अपने ही द्वारा अपनी रक्षा होती है, दूसरेके द्वारा नहीं, अतः उठो और उद्योग करो। लक्ष्यकी प्राप्ति तक मत रुको यही उपनिषदोंकी आज्ञा है।

जैसे हिंसक जन्तु अपने शिकारकी तलाश करता है-जैसे कामी

पुरुष अपनी भोगेच्छा-तृप्तिके लिए प्रयत्न करता है, जैसे भूखों मरता हुआ मनुष्य भोजनकी इच्छा करता है, जैसे पानीमें डूबता हुआ मनुष्य रक्षाके लिए पुकारता है, ठीक उसी तीव्र आतुरता तथा आत्माकी शक्तिके साथ तुम सत्यका अन्वेषण करो! जैसे सिंह शब्दोंसे नहीं काँपता, जैसे वह स्वतंत्र और निर्भीक रहता है, उसी प्रकार तुम भी लक्ष्य-प्राप्तिके उद्देश्यसे संसारमें विचरो, क्योंकि इसके लिए अनन्त शक्ति तथा अनन्त निर्भयता आवश्यक है। अपनी समस्त आत्मिक शक्तियोंका संग्रह करने और साहसके साथ आवरणका भेदन करनेपर तुम्हारे लिए समस्त सीमाएँ टूट जाँयगी, सभी टेढ़े मार्ग सीधे हो जायँगे, यह जानते हुए आगे बढ़ो। यदि तुम आत्माकी खोज करते हो तो जान लो कि जब तुम आत्माको देखोगे तो वही परमात्माके रूपमें प्रत्यक्ष होगी। 'ॐ तत्सत् ।' गुरुके शब्द एकान्त मौनमें प्रविष्ट हुए। उनका स्वरूप वह प्रकाश है जो परमात्मा है।

●

विश्वास करो : 17 :

ध्यानके समय यह शब्द फिर सुनायी पड़े-वत्स! तुम्हें शान्ति प्राप्त हो। यहाँ और वहाँ-कहीं भी तुम्हारे लिये भयका कोई कारण नहीं है। प्रेमस्वरूप आत्मा सबमें व्याप्त है।

और उस प्रेमके लिये परमात्माके अतिरिक्त कोई नाम नहीं है। परमात्मा तुमसे दूर नहीं है। वह देशसे सीमित नहीं है-क्योंकि वह अन्तरमें शासन करता हुआ निराकार है। अपनेको उसके चरणोंमें पूर्णतया समर्पित कर दो। जो कुछ अच्छा या बुरा है सब उसे समर्पित कर दो। कुछ भी शेष न रहे। इस आत्मसमर्पणसे तुम्हारा स्वभाव पवित्र हो जायगा। विचार करो कि प्रेम कितना महान् है! जीवनसे बड़ा है। मृत्युसे बलवान् है। परमात्माके सब मार्गोंमें सबसे सुगम है।

अन्तर्दृष्टिका मार्ग कठिन है, परन्तु प्रेमका मार्ग सुगम है। तुम बालक जैसे हो जाओ। प्रेम और श्रद्धा रखो। तुम्हें कोई दुःख न होगा।

धैर्य और आशा रखो, तो शीघ्र ही जीवनकी समस्त स्थितियोंका सामना करनेकी योग्यता तुममें आ जायगी।

उदार बनो। अहङ्कार तथा अनुदारताके भावको समूल नष्ट कर दो। पूर्ण विश्वासके साथ अपनेको उसे समर्पित कर दो। वह तुम्हारे समस्त मार्गोंको जानता है। उसकी बुद्धिमत्तामें विश्वास रखो। वह माता-पिताकी भाँति प्रेम करनेवाला है। तुम्हारे सुख-दुःखका वह साथी है। उसका अनुग्रह अनन्त है। तुम्हारे बार-बार पाप करने पर भी वह सदा क्षमा ही करता है।

परमात्मासे प्रेम करने पर तुम्हारे ऊपर आयी हुई विपत्ति न रहेगी। बड़े-से-बड़े भयावह अनुभवको भी तुम अपने प्रेमास्पदके दूतकी भाँति पहचानोगे। वस्तुतः प्रेमके द्वारा ही तुम परमात्मा तक पहुँचोगे। क्या माता प्रत्येक समय अपने स्नेहमें समान नहीं रहती है? ठीक ऐसा ही वह परमात्मा तुम्हारा प्रेमी है। विश्वास करो, केवल विश्वास करो तो तुम्हारा कल्याण होगा।

पूर्वकृत पापोंका भय मत करो। मनुष्य बनो। साहसके साथ जीवनका सामना करो। जो कुछ भी आ पड़े उसे झेलो। अनन्त शक्ति तुम्हारे पीछे है यह स्मरण रखो। उसे पुकारो। परमात्मा स्वयं तुम्हारे साथ है। फिर भय क्या है?

यहाँ और भी अमरत्वके लिये प्रयत्न करो। मनको नियमित करो। यही मुख्य कार्य है। यही मनुष्य जीवनका मुख्य उद्देश्य तथा सार्थकता है। जब आत्मा मांसपिंडमें बँधा हुआ-सा हो तो देहबुद्धिपर विजय प्राप्त करके अमरत्व प्राप्तिका यही सुअवसर है। अपनेको अमरत्वके योग्य बनाओ। जो देहबुद्धि पर विजय प्राप्त कर लेता है देवगण भी उसकी उपासना करते हैं। मृत्यु एक भौतिक घटना है। मनका जीवन इससे अधिक बड़ा है। आत्मा का जीवन तो अनन्त है। तब तुम्हारे लिये महान् विचार सोचना तथा उसके द्वारा शीघ्रतासे धार्मिक उन्नति करना कितना आवश्यक है।

बाह्य पदार्थोंकी चिन्ता न करो। चाहे कोई पुरुष समस्त संसारका

स्वामी हो जाय फिर भी उसे अपना स्वामी होना पड़ेगा। यदि वह बुद्धि संबंधी ज्ञातव्यका अन्वेषण कर चुका तो भी उसे अपनेको जानना होगा; क्योंकि आत्मज्ञान ही जीवनका उद्देश्य है। ज्ञान या अज्ञानमें यही एक लक्ष्य है जो जीवनको सार्थक बनाता है। यही एक उद्देश्य है जो जीवन तथा आत्मोन्नतिकी प्रणालीको स्पष्ट बतलाता है। वास्तवमें यही ज्ञान है जो अन्तःकरणको उन्नति तक पहुँचाता है। अतः तुम साहसके साथ आत्मोन्नतिके लिये कटिबद्ध हो जाओ। सम्भव है मार्ग लम्बा हो; परन्तु अन्त होनेमें संदेह नहीं है। अन्य समस्त शब्दोंको छोड़कर केवल सबसे महान्से तुम्हारा संबंध हो!

अपने बलपर खड़ो होओ। यदि आवश्यक हो तो समस्त संसारको–चुनौती दे दो। परिणाममें तुम्हारी हानि नहीं हो सकती। तुम केवल सबसे महान्से संतुष्ट रहो। दूसरे भौतिक धनकी खोज करते हैं और तुम अन्तःकरणके धनको ढूँढ़ो।

वह समय आयेगा जब तुम जानोगे, कि समस्त संसारका साम्राज्य और देवोंका भी स्वर्ग–राज्य आत्मज्ञानके प्रकाशके सम्मुख मिट्टीके बराबर है। उठो और इस महान् प्रयत्नके लिए कटिबद्ध हो जाओ। जीवात्मन्! आत्मिक जीवन तो तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है। तुम्हार धन ऐसा है जिसे चोर चुरा नहीं सकते। आत्मा ही तुम्हारा सर्वशक्तिमान् धन है।

•

सदा कर्मरत रहो : 18 :

ध्यानके एकान्तमें इस प्रकारके शब्द सुन पड़े–इस संसारका बन्धन भयङ्कर है। इससे निकलना अत्यन्त कठिन है। जीवन हम लोगोंको बतलाता है कि सत्य जीवन बितानेके लिये मनुष्यको जीवनके परे जाना चाहिए और मृत्युपर विजय प्राप्त करना चाहिए। यह

महान् कार्य है और इसकी प्राप्तिके लिये उन समस्त स्वभावोंको वशमें करना होगा जो मनुष्यको मृत्यु तक पहुँचाते हैं। वत्स! मैं तुम्हें गम्भीरताके साथ बतलाता हूँ और आज्ञा देता हूँ कि सावधान रहो और उसके सम्बन्धमें ध्यानपूर्वक विचार करो जो कि तुम्हें प्रलोभित करता है। आत्मोन्नतिके लिए केवल यही साधन है—छोटेसे छोटे प्रलोभनके बीज उदयका सावधानीसे निरीक्षण करो। अपने मनपर सख्त पहरा बैठाओ। सर्वदा अपनेको महान्के विचारोंमें संलग्न रखो। इस प्रकार धीरे-धीरे अपनेको मुक्त कर लोगे।

प्रलोभन सहसा ही आता है। क्या हो रहा है, मनको इसका भान भी नहीं होता। और मनुष्य प्रत्यक्ष पराजयके स्थान पर पहुँच जाता है। महापुरुष इसे भली भाँति समझते हैं। अतः बुरे भावोंसे सावधान रहते हैं और सतत अच्छे विचारोंसे इनकी सम्भावनाको नष्ट कर देते हैं। विचारोंसे ही मनुष्यकी उन्नति तथा अवनति होती है। सावधान रहो और सद्विचारोंको प्रश्रय दो।

स्मरण रखो कि तुम्हें अपने मनको सदा कार्यमें लगाये रखना होगा। इसे बेकार न रहने दो। बेकारी बुराई की पोषक है और उसीमें यह फूलती-फलती है। निकम्मेपनसे सावधान रहो। जीवनको गम्भीरताके साथ बिताओ। तुम्हारे सामने आत्मोन्नतिका महान् कार्य है और पासमें समय थोड़ा है। यदि अपनेको असावधानीके साथ भटकने दोगे तो तुम्हें शोक करना होगा और इससे भी बुरी स्थितिको प्राप्त होगे।

अपने इस जीवनको आत्माके लिए सफल बनाओ और इसके द्वारा एक अच्छे भविष्य तथा भावी जीवनका निर्माण करो। संसार नश्वर है। कर्मगति अनिवार्य है।

सावधान रहो जिससे मृत्यु तुम्हें पापरत न पाये। सावधान रहो जिससे तुम सांसारिक वासनाओंसे पराजित होकर कर्मगति द्वारा अधिकाधिक बन्धन तथा घोर दुःखमें न पड़ो। वत्स! मेरे प्रति प्रेम तुम्हारे जीवनका ध्रुवतारा है। एकबार अमृतत्त्वका स्वाद पा लेनेपर तुम्हारे लिये यह असम्भव है कि सूकरकी खालपर निर्वाह करो।

चिंता मत करो। परमात्माका अनुग्रह पर्वतोपम पापसे भी बलवान् है। जबतक तुम विश्वास करते हो तबतक आशा है। फिर भी मार्ग बहुत लम्बा है। विचार करो कि पापोंको सम्पूर्णतया नष्ट करनेके लिये कितने जीवन आवश्यक होंगे।

क्या तब तुम नहीं समझ सकते कि अपने कल्याणके लिये तुम्हें कितनी दृढ़ताके साथ प्रयत्न करना चाहिये? और यदि तुम मुझमें प्रेम करते हो तो क्या मेरे लिये, आदर्श तक पहुँचनेके लिये प्रयत्न नहीं करोगे? मैंने कितने समय तक प्रतीक्षा की।

तुम पूर्ण बनो और मनुष्यकी भाँति प्रयत्न करो। मैं उत्सुकतासे तुम्हारी धार्मिकताकी बाट देखता रहा हूँ। मैं सर्वदा तुम्हारे समीप रहूँगा। मैं सर्वदा तुमसे प्रेम करूँगा। परन्तु अपने कर्त्तव्य-कर्मसे विमुख न होओ।

आलस्य छोड़ो। मनुष्य बनो! मेरे प्रति प्रेम तुम्हारे जीवनका ध्रुवतारा है। तुम्हारे अस्तित्वका आधार है। इसके लिये पूरा प्रमाण है, क्योंकि मेरे प्रति अपने प्रेमके द्वारा तुम मुक्त हो जाओगे। गुरुके प्रति केवल भक्ति आवश्यक है। वह तुम्हारी सारी उलझनोंको सुलझा देगी। इसलिये प्रसन्न रहो। यह जान लो कि मैं सदा तुम्हारे साथ हूँ।

परमात्माके प्रति मेरी लगन, मेरा अनुभव, मेरे पास जो कुछ है वह सब तुम्हें दे दिया जायगा। क्योंकि शिष्यके कल्याणके लिये यदि आवश्यक हो तो स्वयम् अपनेको भी दे देनेमें गुरुका गुरुत्व है। एक बार मैंने तुम्हें स्वीकार कर लिया-यह सर्वदाके लिये है, अनन्तके लिये है।

अब तुम शान्तिमें जाओ। सावधान रहो कि यदि अपने लिये सच्चे हो तो मेरे भी महत्त्व तथा अनुभवकी वृद्धि करोगे।

●

मनको श्मशान बना दो : 19 :

गुरुवाणीने मेरे आत्मासे कहा–वत्स! आत्मोन्नतिके इतिहासके समान आकर्षक कोई वस्तु नहीं है। यह आत्मोन्नति है जिससे जीवन सुखमय होता है। साक्षी रहो, तटस्थ रहो और अपने व्यक्तित्वको ऐसे देखो मानो वह कोई पृथक् वस्तु हो। उठते हुए विचारोंका तथा बदलती हुई इच्छाओंका सावधानीसे अध्ययन करो। अतीतके अनुभवकी उपयोगिता क्षणिक है! आजसे पूर्व वर्षोंकी बातोंकी क्या चिंता? ऐसा विचार करते हुए बिना बाधाके जीवनमें अग्रसर होओ। किसी भौतिक वस्तुका प्रभाव नहीं पड़ता। वह मिट जाती है। अतः अपना समय आत्म-सम्बन्धी पदार्थोंमें दो। तुम्हारा भाव त्यागमय हो। किसी अनुभव तथा विचारका मूल्य आचरण बनानेमें है। इसका अनुभव करते हुए नवीन और उच्च जीवनका निर्माण करो।

संसारी मनुष्य शीघ्र टूट जानेवाले शरीरको–जो मिट्टीका खिलौना है–कितना समय देते हैं? उनका मन क्षणिक और भौतिक पदार्थोंमें कितना लगा हुआ है? वे अविनाशी वस्तुओंमें नष्ट हो जाते हैं। वे मायामें विलीन हो जाते हैं। अतः अपनेको संसारी पदार्थोंके सम्बन्धसे दूर रखो। विषयी मनुष्योंका साथ छोड़ दो। मन सूक्ष्म है। वह भौतिक पदार्थों को आदर्श बनानेका निरन्तर प्रयत्न करता है। यही मायाकी दुष्टता है। काल्पनिक सौन्दर्य तथा बाहरी चमक-दमकसे धोखा मत खाओ। अन्तर्दृष्टिको हाथसे मत जाने दो! अनादि कालसे यह संघर्ष चलता आ रहा है। तुम्हारे लिये परमात्मा-प्रेमके सम्मुख सांसारिक आसक्तिका क्या मूल्य है? आसक्ति शारीरिक है, अतः बन्धन है। तुम तो मुझे हृदयसे प्रेम करते हो।यही अन्तर है। यह बुरा नहीं है कि बहुत कष्टोंके बाद तुम्हें अनुभव हो कि संसार मिथ्या और दुःखमय है। तुम जितना अधिक दुःख पाते हो उतने ही मेरे समीप आते हो।

सहिष्णुताका अभ्यास करो। अपने उत्तरदायित्वको समझो। किसीके दोषोंको देखने और उनपर टीका-टिप्पणी करनेके पहले

अपने बड़े-बड़े दोषोंका अन्वेषण करो! यदि अपनी वाणीका नियन्त्रण नहीं कर सकते तो उसे दूसरोंके प्रतिकूल नहीं, बल्कि अपने प्रतिकूल उपदेश करने दो।

सबसे पहले अपने घरको नियमित बनाओ। ऐसे उपदेश आत्मानुभवके उच्चतम विज्ञानके अनुकूल है; क्योंकि बिना आचरणके आत्मानुभव नहीं हो सकता। नम्रता, सरलता, साधुता, सहिष्णुता, अनसूया-ये सब आत्मानुभवके प्रधान अङ्ग हैं। दूसरे तुम्हारे साथ क्या करते हैं, इसकी चिंता न करो। आत्मोन्नतिमें तत्पर रहो। यदि यह तथ्य समझ लिया तो एक बड़े रहस्यको पा लिया। सब वस्तुओंके मूलमें अहङ्कार स्थित है। उसेसमूल नष्ट कर दो। रही कामना, सो सावधानीसे उसकी देखरेख किया करो। उसपर विजयका तबतक विश्वास नहीं किया जा सकता जबतक कि यह शरीर श्मशानमें न पहुँच जाय।

इस मनको श्मशान बना डालो। यदि जीवनकालमें ही मुक्त होना है तो समस्त कामनाओंको जला डालो। तुम्हें बिना विचारके आज्ञा-पालन करना सीखना चाहिये। तुम एक बच्चेके अतिरिक्त और क्या हो? क्या तुममें वास्तविकत ज्ञान है? इसलिये बच्चेकी भाँति मार्ग में पीछे-पीछे चलो।

अपनेको सब प्रकारसे मेरी इच्छाका अनुगामी बनाओ। क्या मैं प्रेममें तुम्हारे लिये माताके सदृश नहीं हूँ? तुम्हारे लिये मैं पिताके समान भी हूँ; क्योंकि आवश्यक होने पर दण्ड भी देता हूँ। यदि तुम्हारी इच्छा गुरु बननेकी है तो पहले शिष्य बनना सीखो। सदाचारिता ही आवश्यक है। पहले तुम्हारा विचार बालकवत् परिच्छिन्न था; परन्तु अब विवेकमिश्रित होता जा रहा है। बच्चा विचारहीन होता है और युवक निरंकुश। वह मनुष्य ही है जो इसका अधिकारी है। धार्मिक भावमें विचार तुम्हें मनुष्य बनानेका है।

मैं तुम्हें उत्तरदायी लगनका सच्चा और सदाचारी बनाऊँगा। मैं तुम्हारी भक्ति और अनुरक्तिको सच्चाई तथा दृढ़ताके रूपमें प्रकट कर दूँगा। अग्रसर होओ, मेरा प्रेम और आशीर्वाद सर्वदा तुम्हारे साथ है। •

मिथ्यासक्ति त्यागो : 20 :

ध्यानके समय ये शब्द सुन पड़े—अपने हृदयमें कटुता मत रखो। अपने सम्बन्धमें सच्चे रहो। अपने विषयकी नीच भावनाओंको निकाल दो। मिथ्यासक्तिको त्यागो। शरीरके स्थान पर आत्माको देखो। अपनेको वैसा ही देखो जैसा दूसरे तुम्हें देखते हैं। अपने दोषोंको मत छिपाओ। कड़ाईके साथ उनकी टीका-टिप्पणी करो। बलवान बनो। यदि तुममें दोष हो भी तो सिंहके दोषोंके सदृश हों।

नियम बलवान है। यह ठीक तुम्हारी इच्छाके अनुकूल हृदयको चकनाचूर कर तुम्हारे व्यक्तित्वको मिटा तो देगा; परन्तु साथ ही यह सच्चे आत्मज्ञान तक पहुँचा भी देगा। क्रियासे प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। अतः तुम्हारे समस्त कर्म हृदय तथा भावनाकी सच्चाईसे उठें। तभी तुम्हें शान्ति मिलेगी।

बहुधा भावनाके नाम पर बहुतसे पाप छिपे रहते हैं। उनके अन्तस्तलमें भौतिक स्वार्थके भाव कार्य करते हुए हो सकते हैं। उन्हें सुनहले वस्त्रों द्वारा ढकनेसे स्थिति नहीं सुधरती। भौतिक अहङ्कारको उच्च भावना समझा जा सकता है। परन्तु विवेक शीघ्र ही ऐसे आवरणको नष्ट कर देता है और बतलाता है कि मिथ्यासक्ति सर्वदा स्वार्थपरायण, बलवान, निर्दय तथा आत्माके विपरीत होती है। यह निरंकुश, अन्धी तथा देहाधीन होती है।

इस मिथ्यासक्तिके प्रतिकूल सच्चा प्रेम—शुद्ध और आत्म-सम्बन्धी होता है—तथा प्रेमीको अनन्त स्वतन्त्रता देता है। वह ज्ञान तथा आत्म-समर्पणसे परिपूर्ण होता है। अतः अपने स्वभावसे मिथ्यासक्ति तथा मिथ्याभावनाको निकाल दो। एक बार इनका वमन कर देने पर फिर इन्हें देखकर घृणा ही होगी और फिर ऐसे विचार न होंगे। यह भीषण बन्धन है। इसे स्मरण करो और साहसके साथ स्वतन्त्रताके लक्ष्य तक अग्रसर होओ।

संन्यास सबसे उच्च जीवन है। अपनेको समस्त बन्धनोंसे मुक्त

कर तुम उन सबकी सहायता करोगे जो तुम्हें जानते हैं या जो तुम्हारे जीवनमें आयेंगे। संन्यासी आत्मानुभव द्वारा अपने सम्पूर्ण कर्तव्योंका पालन करता है। वह अपने त्यागसे औरोंको पूर्ण बनाता है। तुम अपने हृदयमें और कर्मोंमें संन्यासी हो। किसी पदार्थ या व्यक्ति पर निर्भर मत रहो।

औरोंको स्वतन्त्रता दो और स्वयं स्वतन्त्र बनो। हतोत्साह मत होओ चाहे तुम्हारी स्थिति प्रतिकूल ही क्यों न हो। यदि इसे धार्मिक रूप दिया जाय तो यह अनुकूल हो जायगी। अपनी भावनाओंको ईश्वराभिमुख करो। हृदयसे बुरी भावनाओंके निकल जाने पर तुम अपने स्थानमें रहकर भी बहुतोंको प्रकाश और सहायता प्रदान करोगे; चाहे स्वयं उनको न देखो। सिंह बनो, तब सब कमजोरियाँ स्वयं तुमसे दूर हो जायँगी। ईश्वरत्व-प्राप्तिकी शुभेच्छा करो, तो देहबुद्धिकी सीमा टूट जायगी। तुम शुद्ध आत्मा हो जाओगे। तुम प्रकृतिके दृश्यों-पर्वत, विशाल समुद्र, सूर्यसे शिक्षा ग्रहण करो। महान्से एकत्व प्राप्त करो।

वत्स! आत्मोन्नतिका मार्ग लम्बा और कठिन है। आत्मोन्नति करनेके पहले यह आवश्यक है कि तुम अपने संबंधमें स्पष्टवक्ता बनो। जब तुम्हें बार-बार दुःखके अनुबव होंगे और तुम्हारा अभिमान चूर्ण हो जायगा तब तुम्हारे स्वपाप-गोपनका परदा फट जायगा।

परमात्माके साथ मूर्खता रह नहीं सकती। आत्माके साथ कपट रह नहीं सकता। सूक्ष्मतम और अत्युत्तमको ही रहना चाहिये। तुम्हें दुःखके दत्तोंके प्रति कृतज्ञ होना चाहिये-क्योंकि वे तुम्हारे समक्ष शीघ्र ही तुम्हारी कमजोरियों तथा आत्माको प्रकट करते हैं।

अहो दुःखदेव! धन्य हो; धन्य हो। थोड़े अध्ययनने तुममें बौद्धिक अहङ्कार पैदा कर दिया है। इससे अधिक अध्ययन तुम्हें धार्मिक बना देगा। याद रखो कि मन आत्मा नहीं है। अनुभव द्वारा मस्तिष्कको चकनाचूर होने दो। यह इसे पवित्र कर देगा। यही प्रधान वस्तु है। क्रमशः आत्म-सूर्य अविद्याके घने अंधकारको नष्ट कर देगा और तब लक्ष्य तुम्हारे समक्ष प्रत्यक्ष हो जायगा और तुम उसके प्रकाशमें समा जाओगे! ●

गुरुने अपने उपदेशोंको जारी रखते हुए कहा-"मैं तुम्हें पूर्णरूपसे अपने अधीन करूँगा। पग-पग पर बाध्य होकर तुम मेरे निकट आते रहोगे,क्योंकि मैं तुम्हारा स्वामी हूँ-ईश्वर हूँ। मैं तुम्हारे और अपने बीच इन्द्रिय-भोगके भावका सम्बन्ध न रहने दूँगा। वत्स! परदेको फाड़ डालो। आवरणको नष्ट कर दो।"

तब मैंने जाना कि गुरु ही मेरे अभिभावक हैं। एक बड़े भारसे मुक्तिकी प्रतीति हुई। उन्होंने क्रमशः कहा-

अभ्यासका अनुभव अच्छा है पर वह ज्ञान, जो कि सदाचरणसे प्राप्त होता है, उसकी अपेक्षा अच्छा है। सदाचरण ही सबकुछ है और वह केवल त्यागसे प्राप्त होता है। दुःख और क्लेशसे आत्म-शक्तिका विकास और उससे आचरण बनता है।

उनका स्वागत करो। देखो कैसे सुअवसर इनसे प्राप्त होते हैं। कहावत है हीरा ही हीरे को काटता है और दुःख ही बुरे संस्कारों पर विजय पाते हैं।

धन्य हो, धन्य हो! दुःखदेव! धन्य हो! परमभक्त कुन्ती प्रार्थना करती थी :

विपदः सन्तु नः शश्वतः, तत्र तत्र जगद्गुरो।
भवतो दर्शनं यत्स्यादपुनर्भवदर्शनम्।।

उनके भाग्यमें सर्वदा दुःख ही हो, जिससे वह निरंतर प्रभुको स्मरण रख सके। वत्स! उनकी ही प्रार्थना सच्ची थी। तुम भी वैसी ही करो। तुम्हें मुझसे प्रेम है तो जाने कि दुःख तुम्हें मेरे अधिक निकट लायेंगे और तुम्हारे उच्च स्वभावको प्रकाशित करेंगे।

यदि ईश्वर-भावका प्रकाश करना है तो जीव-भावको मिटा देना होगा! चित्तके क्षणिक वेशके परे वास्तविक 'तुम' हो। पुत्र! कोई अन्तर नहीं है। धार्मिक जीवनमें कोई मार्ग ग्रहण कर लेने पर उसे ग्राहवत् क्यों पकड़ लेते हो? परमात्माका अनुभव किसी भी मार्गसे किया जा

सकता है। जहाँ कहीं भी महत्त्व और प्रकाश है वहीं परमात्मा साक्षात् है।

सब दीवारोंको गिरा दो। तुम्हारे लिये कोई विशेष सीमाएँ उपयुक्त नहीं हैं। उदार बनो! तुम्हारा प्रधान कर्तव्य आत्माको पूर्ण बनानेमें है। किसी दूसरेसे पृथक् सिद्धान्तका उपदेश देनेका आदेश तुम्हें किसने दिया है? तुम्हें उपदेश देनेकी ही आज्ञा किसने दी है? मैंने तुम्हारी आँखोंको कुछ खोल दिया है। इसके पहले तो दृष्टि धुंधली थी। अब तुम जान रहे हो कि दूसरोंको शिक्षा देनेके पहले तुम्हें स्वयं को शिक्षा लेनी चाहिये। अभिमानसे सावधान रहो। कार्य करनेके समय प्रकट निरभिमान तथा उत्साहके रूपमें यह दृढ़ मूलवाला दोष छिपा रहता है। वस्तुतः अहङ्कार ही सबसे बड़ा दोष है। पहले अपनेको वशमें करो! इधर-उधर दौड़ते हुए मनसे दूसरोंके कल्याणकी कैसे आशा कर सकते हो? एकाग्रता ही प्रथम आवश्यक है। तुम्हारे चित्तकी सतह बालकके सदृश चंचल और अस्थिर है।

यह आवश्यक है कि अपने चित्तकी गहराईको अर्थात् वास्तविक पुरुषको, जो तुम हो, सतह पर लाओ। एक क्षण देवता और दूसरे क्षण इन्द्रियोंका दास-ऐसी स्थितिमें तुम्हारा कल्याण न होगा। काल्पनिक कथाओं तथा मायवादका प्रभाव भगवान् बुद्धदेव तथा ऋषियोंके समयसे आजतक है। पृथ्वी जैसी तब थी वैसी अब भी है। ग्रीष्मकी उष्णता, हेमन्तकी शीत, मनुष्योंके हृदयपर कामनाओंका आधिपत्य दरिद्रता और ऐश्वर्य, आरोग्य और बीमारी साथ-साथ थीं। जङ्गल, पर्वत, नदी, नगर, बाजार तब भी थे और मृत्यु भी थी। ठीक ऐसी ही कठिनाइयोंका सामना तब भी करना पड़ता था। बुद्धदेवने इसी संसार पर दृष्टिपात किया था, जिसे तुम देखते हो। अतः वह आत्मानुभव भी संभव है। वेदोंका आविर्भाव भी ठीक ऐसी ही मानव-स्थिति में हुआ था; जैसी तुम देखते हो। मेरे वत्स! शीघ्र ही कार्य में लग जाओ।

इस कार्यात्मक मनको सबसे पहले अपने वशमें करना होगा।

यह वह शस्त्र है, जो कि परिपक्व बनानेपर वासनात्मक मनकी छिपी हुई तहको ढूँढ़ निकालनेमें तथा पुराने संस्कारोंको, जो अवसर पाकर आक्रमण कर बैठते हैं, जला डालनेमें सहायक होगा। और इसी मनको, ईश्वराभिमुख बनानेपर उच्चतम समाधि प्राप्त की जा सकती है। मनुष्य ज्ञातसे अज्ञातकी ओर बढ़ता है। ज्ञान ही विजय है, जो कार्यात्मक मनके विस्तारसे प्राप्त होता है, अधिकाधिक विचार प्राप्त होते रहते हैं। इसका अन्त सर्वज्ञतामें है। वत्स! सच्चा ज्ञान भौतिक नहीं, आत्मिक है। यह पुरुष है–भौतिक पदार्थ नहीं, जो ज्ञानके द्वारा प्रकाशित होता है।

सच्चा ज्ञान क्रियात्मक अनुभवमें निहित है। भोजनके पाचनकी भाँति सद्विचारोंके ग्रहणसे कार्यात्मक मनपर प्रभाव पड़ता है। शरीरकी रग-रगमें इन्हें प्रविष्ट हो जाना चाहिए। तब यह शरीर चिन्मय हो जाता है।

यह शरीर आत्मा हो जाता है। इसी भावमें बहुतसे आचार्योंने कहा–मेरा भौतिक रूप भी चिन्मय है। अतएव गुरुकी भौतिक सेवा भी सौभाग्य है। शरीर क्रमशः स्वयं आत्मा हो जाता है।

वत्स! तुम्हारे समक्ष सबसे महान् कार्य है–आत्म-सम्मिलन। इस समय तुम्हारी एकाग्रता मानसिक तथा बाह्य स्थिति पर निर्भर है। औरोंसे मिलना तुम्हें आवश्यक होता है। परन्तु तुम्हें उनके मनसे केवल क्षणिक उत्तेजना मिलती है। दूसरेसे बात करते समय तुम स्वयं अपनेसे ही बात करते हो। सच्ची उत्तेजना अंतस्तलसे ही आनी चाहिये।

अकेले आगे बढ़ो! किसीकी सहायताकी अपेक्षा मत करो!

वत्स! मन ही स्वयं गुरु हो जाता है, यह एक प्राचीन शिक्षा है। ऐसा क्यों? क्योंकि आत्मानुभवके लिये मन पर बार-बार प्रभाव डालनेसे वह स्वयं आत्मा हो जाता है।

मैं तथा अन्य सब लोग उस महान् सत्यके एक रूप हैं। पहले मैं तुम्हारे समान ही शरीरमें था और उस समय मेरा चित्त मानों एक

खिड़की था–जिसके द्वारा तुम अनंतकी झाँकी लेते हो। वह चित्त जो कि स्वयं मैं था। अपनी सत्ता को परमात्मामें विलीन कर देनेके लिये मैं स्वयं प्रयत्न करता हूँ।

जो सत्ता मुझमें है–तुममें हूँ–वही ब्रह्म है। मेरे वत्स! केवल उसीकी उपासना करो! केवल उसीकी उपासना करो!!

•

गुरु-महिमा : 22 :

तब एक आवाज ने गुरुमहिमा करते हुए मेरे आत्मासे कहा :

वत्स! गुरुमें पूर्ण विश्वास रखो। उनकी कृपासे, उनकी ज्ञानज्योतिसे–तुम्हारा अंतरात्मा पुनर्जीवित हुआ है। उन्होंने तुम्हें ढूँढ़ा और पूर्ण बनाया है। गुरुका साक्षात्कार शिष्यके ऊपर वर्षाकी झड़ी–सा गिरता है। यह अबाधित है और इसे कोई रोक नहीं सकता। तुम्हारे लिये उनका प्रेम असीम है। वह तुम्हारे लिये दूरसे दूरतक जायँगे। वह तुम्हें कभी भी नष्ट नहीं होने देंगे, उनका प्रेम ही उनकी दिव्यताका प्रमाण है। उनका शाप भी दूसरे रूपमें आशीर्वाद ही है।

गुरुका साक्षात्कार तुम्हारे लिए प्रत्यक्ष और मूर्तिमान है। उन्हींकी प्रकृतिके रूपान्तरसे ही तुम ईश्वरको देखते हो।

तुम्हारे लिये अन्य मार्ग नहीं है। अपनेको गुरुके प्रति पूर्णतया और सर्वभावेन समर्पित कर दो। अंतस्तलमें जो कुछ है वह ईश्वर ही है। जिसने उसकी प्रकृतिका साक्षात्कार किया है वह सबसे बड़ा देव है। मनुष्य, जिसने आत्म-साक्षात्कार किया है, उसकी महान् महिमाको देखते हुए उस साक्षात्कारको बहुत रूपोंमें देखता है। गुरु मनुष्यसे विशेष है। उनके द्वारा ही ईश्वरके सम्पूर्ण भाव प्रकाशित होते हैं। क्या वह स्वयं शिव नहीं है? महान् गुरुका स्वयं शिव एक भाग-मात्र है। अपने गुरुको शिव समझकर ध्यान करो। उन्हें अपना इष्ट समझकर ध्यान करो और साक्षात्कारकी शुभ घड़ीमें तुम प्रकृतिको, जो कि गुरु

है, अपने इष्टमें मिला हुआ पाओगे। तुम्हारे सामने एक पुरुष खड़े हैं–जो आत्मसाक्षात्कारके द्वारा अवतीर्ण ईश्वर हैं। तब फिर तुम्हें निराकार ईश्वर अथवा दैवीसङ्कल्पों, भावोंसे क्या मिलेगा? जहाँ भी जाओगे वे तुम्हारे पीछे चलेंगे। मनुष्य जातिकी सहायताके लिये ही उन्होंने निर्वाण तकको त्याग दिया है। इस रूपमें वह दूसरे बुद्ध ही हैं। जिसने उनके स्वरको पहचाना है, वह उनके व्यक्तित्वको और भी अधिक सत्य तथा शक्तिमान् बना देता है। ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके वह अमानुषी जीवन और ज्ञानसे संपन्न होता है। जो ब्रह्मसे एक हो चुका है उसे सब देवता नमन् करते है। अपनी गुरु–पूजाकी दृष्टिसे ही विद्यमान सम्पूर्ण दिव्यताको देखो! इस प्रकार सब एक बन जायगा और सर्वोच्च अद्वैत ज्ञान प्राप्त होगा; क्योंकि गुरु और भी अधिक बड़े दृष्टिकोणसे दीखेंगे। तुम्हारे निजके ज्ञान और भक्तिकी बुद्धिके अनुसार ही वह दीख पड़ेंगे। व्यक्तित्वके उत्तम विकाससे ही सर्वोच्च निःस्वार्थता जो आत्मा है, पहचानी जाती है। वहाँ गुरु, ईश्वर और तुम भी, इतना ही क्यों–समस्त सृष्टि एक हो जाती है। यही लक्ष्य है! गुरुको अनंतके दृष्टिकोणसे देखो। यही बुद्धिमत्ता है। गुरुभक्तिसे ही तुम श्रेष्ठ मार्ग पर चलते हो।

एक अर्थमें दैवीमनुष्य शुद्ध ईश्वरत्त्वसे भी अधिक सत्य है। पिताको केवल पुत्रके द्वारा ही समझा जा सकता है। ईश्वरकी पूजा करनेसे पहले भी मनुष्यकी पूजा करो। मनुष्यकी ब्रह्म-साक्षात्कार-भावनासे पृथक् ईश्वर कहाँ है? शिष्यके लिये गुरुपूजा सर्वोपरि है। क्योंकि उनके व्यक्तित्वकी पूजामें ही व्यक्तित्वका भी सम्पूर्ण ज्ञान अन्तमें नष्ट हो जायगा। पहले शारीरिक उपस्थिति आवश्यक है, तब गुरुकी साकार पूजा होती है। दूसरा कदम इस शारीरिक उपस्थितिसे और गुरुकी पूजासे भी परे जाना है; क्योंकि वे शिक्षा देते हैं कि शरीर आत्मा नहीं है। शिष्यको बच्चेके समान ही शिक्षा देनी पड़ती है। शारीरिक भावसे गुरुके सन्देश और विचारोंको पहिचानना, व्यक्तित्वसे भावकी ओर जाना, मन और शरीर उत्तम और घनिष्ट सम्बन्धोंमें नहीं गिने जा सकते।

गुरुके स्वरूपमें शिष्यके व्यक्तित्वका अधिकाधिक लय होता है और गुरुका व्यक्तित्व अधिकाधिक उसमें लय होता हुआ दिखायी पड़ता है, जिसमें उसका भी शरीर व्यक्त था। तब सर्वोत्कृष्ट एकता प्राप्त होती है। गुरु और शिष्यके द्वैत-व्यक्तित्वकी धाराएँ अनन्त ब्रह्मका समुद्र बन जाती हैं। उस श्रेष्ठ सौन्दर्यकी प्राप्तिके लिये जहाँ कहीं भी जानेकी वह आज्ञा देते हैं, क्या वहाँ नहीं जाओगे? यदि वह ऐसा चाहते हैं तो तुम्हें प्रसन्नतापूर्वक सहस्त्रों जन्म-मृत्युओंमें जाना होगा। तुम उनके प्रिय सेवक जो हो। उनकी इच्छा तुम्हारा धर्म है, तुम्हारी इच्छा उनकी इच्छाकी यन्त्र बन गयी है। उनका अनुसरण करना ही तुम्हारा धर्म है। शास्त्र कहते हैं गुरु ही ईश्वर है। गुरु ब्रह्मा, विष्णु और महादेव हैं। वह वास्तवमें परब्रह्म हैं, गुरुसे बढ़कर कोई नहीं है।

●

आध्यात्मिक पराक्रम : 23 :

ध्यानके समय पुनः गुरुदेवने कहा-मेरे पुत्र! मृत्युकी घड़ी किसी समय भी आ सकती है। अतः जीवनका सबसे अधिक लाभ लो। जब भी तुम्हें ऊँचा भाव मिले उसे कृपणतापूर्वक पकड़ लो! ऐसा न हो कि प्रमादके पापसे वह नष्ट हो जाय। प्रत्येक आदर्श-भावनाके लिए एक व्यावहारिक साक्षात्कार होता है। साक्षात्कारकी पद्धति समान रूपसे उतनी ही मूल्यवान् है जितना स्वतः आदर्शका ज्ञान प्राप्त करना है।

तोले भर अभ्यासके सन्मुख मनों वार्तालाप किस गणनामें है? वार्तालापसे भावोद्दीपन हो सकता है, किन्तु समय और भावना दोनों ही नष्ट हो जाते हैं। तबतक तुम उस उत्तरदायित्वको धारण न करो कि आदर्श तुमसे चाहता है।

निष्कपट बनो। अपनी अकर्मण्यता पर सुनहला कपड़ा न डालो और न उसे त्याग ही कहो। आध्यात्मिक आवेशकी लगनके सारे

अभावके पीछे निश्चय रखो कि शरीरका ध्यान ही सदा रहता है।

यदि मनमें, आध्यात्मिक जीवनमें कोई साहसपूर्ण मार्ग ग्रहण करनेकी लालसा है तो यह सम्भव है कि तुम्हारा शरीर जाग्रत हो जाय।

यह पूछकर कि हे मन! क्या यह सुखदायी होगा? आह! शरीरके कारण तू आदर्शसे कितना अध:पतित हो गया है?

मेरे पुत्र! आध्यात्मिक जीवनमें उतने ही साहसकी आवश्यकता है, जितना कि सांसारिक सङ्घर्षमें। जितना धैर्य एक कृपण धन इकट्ठा करनेमें रखता है, जितना साहस योद्धा शत्रु पर आक्रमण करनेमें रखता है–तुम्हें उन अविनाशी सम्पत्तियोंको इकट्ठा करनेमें और सदाके लिये शरीर और शरीर चेतना पर स्वामित्व प्राप्त करनेमें उतना ही धैर्य और साहस रखना चाहिये। यह रहस्य है जो किसी भी रूपमें साक्षात्कारके पीछे गुप्त रहता है। अदम्य साहस, ऐसा साहस जो कि भयको जानता ही नहीं। आत्म-विश्लेषणकी शक्तियोंको बढ़ाओ। तुम्हें ज्ञात होगा कि जब तुम वीरतापूर्वक सच्चा और त्यागमय जीवन ग्रहण करनेमें असफल होते हो, ये शक्तियाँ ही तुम्हें प्रेरणा एवं बल देती हैं।

यह शरीर तो समूल नष्ट कर डालना चाहिये। इसे अपने-आपको आत्मानुभव करनेके दृढ़ सङ्कल्पमें लग जाना चाहिये। वत्स! अन्धेरेमें एक डुबकी लगाओ। तुम्हें अनुभव होगा कि वही अंधकार प्रकाश हो गया है। समस्त बन्धनोंको काट डालो। अथवा शरीरको भविष्यकी अनिश्चितताके सबसे बड़े बन्धनोंके अधीन कर दो। तुम शीघ्र ही सर्वोच्च स्वतन्त्रता प्राप्त कर लोगे। तब शरीर स्वयं तुम्हारा सेवक हो जायगा।

संसारी जीवनकी भाँति ही आध्यात्मिक जीवनमें भी वीरतापूर्ण कदम रखना आवश्यक है–जो कि कभी जोखिम नहीं उठाता, वह कभी लाभकी आशा नहीं कर सकता। शरीरको अनिश्चितताके समुद्रमें फेंक दो। उस भ्रमणशील संन्यासीकी भाँति बनो, जो किसी भी व्यक्ति, स्थान तथा वस्तुओंमें आसक्त नहीं होता।

शरीरसे ऊपर उठो और आत्मामें स्थित होओ। जंगलमें चीतेकी भाँति ही तुममें पराक्रमकी आवश्यकता है। केवल दृढ़ भुजाएँ ही मायाका परदा फाड़ सकती हैं। जूएबाजीसे काम नहीं चलेगा।

मनुष्य बनो। जबतक शरीरके लिये भय है, आत्म-साक्षात्कार नहीं हो सकता। संसारी जीवोंने संसारी धन्धोंमें जो त्याग किये हैं, उन्हें सोचो! तुम क्या आध्यात्मिक तत्त्वान्वेषणके लिये त्याग नहीं कर सकते?

आत्मज्ञान केवल वाक्-पटुता अथवा वेष धारण करनेसे ही नहीं होता। आराम लेनेके सभी स्थानोंसे अलग हो जाओ। बाहर मैदानमें निकल पड़ो। अनन्तको अपना लक्ष्य बनाओ। सम्पूर्ण सृष्टिको अपना भ्रमण-क्षेत्र बना दो।

सभी अनुभवोंका स्वागत करो। विचारोंकी संकुचित झाड़ियोंसे बाहर निकलो।

निर्भयता तुम्हें मुक्त कर देगी। जैसे यह निश्चित है कि जीवनमें धर्म ही केवल सत्य है, उसी प्रकार यह भी उतना ही निश्चित है कि संन्यास ही सच्चा अध्यात्ममार्ग है। धर्मके सदृश त्याग एक वेष नहीं है। यह सबको सम्मिलित किये हुए है। यह चेतनाकी एक दशा है।

व्यक्तित्वकी एक स्थिति है। साक्षात्कारमें तुम्हें स्वयं ईश्वरके सम्मुख होना चाहिये। त्यागमें तुमको स्वयं सनातन शान्तिका अनुभव करना चाहिये। कोई दूसरा तुम्हारे लिये साक्षात्कार नहीं कर सकता। इसी प्रकार तुम्हारे लिये कोई दूसरा त्याग भी नहीं कर सकता।

अतः वीर बनो और अपने पैरों पर खड़े होओ। तुम्हारे आत्माके अतिरिक्त दूसरा कौन तुम्हारी सहायता कर सकता है? अपने ही मनको अपना गुरु बनाकर, अपने ही अन्तरात्माको ईश्वर बनाकर, सिंहकी भाँति निर्भय होकर आगे बढ़ो। जो भी अनुभव तुम्हें प्राप्त हो, यह समझो कि शरीर ही प्रभावित होता है, आत्मा नहीं। इतना विश्वास और दृढ़ता प्राप्त करो कि कोई भी वस्तु तुम्हारा दमन न कर सके। तब प्रत्येकका त्याग करके तुम्हें ज्ञात होगा कि समस्त पदार्थ तुम्हारी

आज्ञामें हैं, तुम उनके दास नहीं हो। फिर भी मिथ्या उत्साहने सावधान रहना। प्रिय या अप्रिय मात्रास्पर्शोंसे चिन्तित न होना।

बिना मार्गके, बिना भयके, बिना पश्चात्तापके आगे बढ़ते जाओ। सच्चे संन्यासी बनो! मिथ्या विचारोंका आश्रय मत लो। समस्त आवरणोंको नष्ट कर दो। सब बन्धन छिन्न-भिन्न कर दो। समस्त भयोंको जीतकर आत्म-साक्षात्कार करो।

देर मत करो! समय थोड़ा है। जीवन भागता जा रहा है। कल चला गया। आज तेजीसे जा रहा है। काल सिर पर खड़ा है। केवल ईश्वरका ही भरोसा करो। त्याग द्वारा तुम सब प्राप्त करोगे। त्याग द्वारा ही तुम समस्त कर्तव्योंको पूरा करोगे। अपने जीवनको त्यागकर तुम सनातन जीवन प्राप्त करोगे। किस जीवनका त्याग करोगे? इन्द्रियोंका जीवन और इन्द्रियपोषित विचार। अपने व्यक्तित्वकी गहरी गुफामें जाओ फिर देखोगे कि पहलेसे आत्माकी शक्ति अन्दर काम कर रही है। वह कभी भी उदासीन सतहको वैराग्य और ईश्वर दर्शनकी बड़ी आँधीमें परिणत कर देगी। उठो और अपने आत्मामें विश्वास करो। बहुत देर तक उदासीन रह चुके हो। अब तीव्र आतुरतामें ही आत्माकी सम्पूर्ण श्रेष्ठ वस्तुओंका वरण होगा।

•

विश्वासमें ही भलाई : 24 :

गुरुदेवने पुनः कहा-वत्स! तुम्हें मन्त्र पहले ही दिया जा चुका है। आज्ञाएँ भी पहले ही दे दी गयी हैं, अब कर्मकी आवश्यकता है। बिना अभ्यासके दीक्षाका कोई मूल्य नहीं है। तुम्हें कितना बड़ा शोक होगा कि तुम निश्चय और अन्तर्दृष्टिको इतने समय तक अभ्यासमें नहीं लाये। मार्ग मिल जानेपर अब वीरतासे आगे बढ़ो। आत्म-साक्षात्कारका दृढ़ सङ्कल्प करनेवालेका मार्ग कौन रोक सकता है? तुम्हें अकेले देखकर ईश्वर तुम्हारा साथी सखा और सर्वस्व होगा। ईश्वरकी सत्ताका और भी

अनुभव करनेके लिये सबको छोड़ दिया जाय-क्या यह अत्युत्तम नहीं है? प्रकृतिका त्याग करनेपर प्रकृति स्वतः तुम पर सत्य सौन्दर्य प्रकट करेगी।

इस प्रकार प्रत्येक वस्तु तुम्हारे लिये आध्यात्मिक बन जायगी। एक घासका तिनका भी तुम्हें आत्माका उपदेश करेगा।

जब तुमने सबका त्याग कर दिया है और अकेले रास्तोंमें चलते हो तो याद रखो मेरा प्रेम और बुद्धिमत्ता सदा तुम्हारे साथ रहेगी। तुम निकट होओगे। तुम्हें और भी अन्तर्दृष्टि प्राप्त होगी। सम्पूर्ण वस्तुओंके साथ एक होओगे। मेरे वत्स! त्याग वैराग्यका ही एक मार्ग है। आजसे अपनेको मरा हुआ समझ लो।

यह समझ रख कि किसी समय किसी भी प्रकारसे समग्र शरीरकी आत्माकी बलि चढ़ानी होगी। देहाध्यासको जीतना होगा। उस दीर्घ मार्गको तुम उत्साहहीन होकर चलनेपर छोटा नहीं कर सकते। यदि तुममें पर्याप्त रूपसे उत्सुकता है तो समयका ठीक उपयोग करो। प्रत्येक अवसरका तत्क्षण लाभ उठाओ। जैसे तुम हो और जैसा तुम्हें बन जाना चाहिये-इन दोनोंके बीचके अन्तरको एक ही छलाङ्गमें यदि तुम पार कर सकते हो तो ऐसा करनेकी शीघ्रता करो। अपने शिकार पर चीतेके सदृश झपटो। मृत्युधर्मा शरीर पर दया न करो। तब तुममें अमर आत्माका प्रकाश होगा।

मेरे पुत्र! दुःखोंकी ओर ध्यान न दो। विविधताओंसे क्या प्रयोजन है? जब कि विश्वात्मा स्वयं प्रकट हुआ है। विविधताएँ केवल शारीरिक हैं। उन पर मनको केन्द्रित न करो। एकसे ही सम्बन्ध रखो। बहुतोंसे नहीं। वैराग्यकी शक्ति रखते हुए इस बातकी चिन्ता न करो कि क्या-क्या अनुभव तुम्हें प्राप्त होंगे? याद रखो-तुम स्वयं अपने शत्रु हो और स्वयं ही मित्र भी। एक ही झटकेसे पूर्व संस्कारोंके बन्धनोंको काट दो।

आवश्यक भावना तुममें एक बार जाग्रत हो जाने पर काम आसान हो जायगा। उस आत्माको बनाने और पुष्ट करनेमें मेरी दया

और आशीर्वाद तुम्हारे साथ रहेंगे। विश्वास रखो। विश्वासमें ही भलाई निहित है।

दूसरोंकी सम्मतियोंसे तुम्हें क्या लेना है? मनके ऐसे भाव तुम्हारे लिये अर्थहीन हैं। जब तक तुम दूसरोंसे मान-प्राप्तिकी आशा रखते हो तबतक निश्चिय तुममें मिथ्याभिमान स्थान पाये हुए हैं। स्वयंकी आँखोंमें ही पवित्र बनो। तब दूसरे चाहें सो कहें, तुम्हें उनकी परवाह न होगी। आदेश-उपदेशकी प्रतीक्षा मत करो। अपनी ही उच्च प्रवृत्तिका अनुसरण करो। केवल अनुभव भी तुम्हें सिखा सकता है। व्यर्थ भाषणमें समय नष्ट न करो। इससे तुम्हें कुछ भी न मिलेगा।

सब तरह से तुम अपना ही आश्रय लो। मार्गदर्शनके लिये अपनी ही ओर देखो, दूसरोंकी ओर नहीं। तुम्हारी सत्यता तुम्हें दृढ़ बना देगी। तुम्हारी दृढ़ता तुम्हें लक्ष्य तक ले जायगी। तुम्हारी सत्यता तुम्हें निश्चयी भी बनायेगी, और तुम्हारा निश्चय तुम्हें सब भयोंसे मुक्त करेगा। तुम्हें मेरे आशीर्वाद! सदाके लिये तुम्हें मेरे आशीर्वाद!!

आत्म-विश्लेषण करो : 25 :

और गुरुवाणीने कहा-मेरे पुत्र! तुम अपने को अन्तरतम आत्मामें खींचो। बाह्य वस्तुएँ केवल तीर और बर्छीके समान हैं, आत्माको घायल करती हैं। अन्तरात्माको अपना सच्चा निवास स्थान बनाओ। एक महर्षिने कहा है-मिथ्याओंका मिथ्या सब मिथ्या है। मृत्युके क्षणमें सारे संसारका खजाना भी किस कामका? उपनिषद्में प्रसिद्ध नचिकेता भली-भाँति जानता था। उसने उस महान् विजयसे जो त्यागसे प्राप्त होती है, स्वयं यमको भी जीत लिया था। वह सब जो कि रूपधारी है, अवश्य मृत्युको प्राप्त होगा। सब रूपका भाग्य यही है। स्वयं मन भी एक रूप है। वह भी परिवर्तन और विनाशशील है।

अतः तुम मन और रूप दोनोंसे परे होओ। सर्वोच्च दृष्टिबिन्दुसे कुछ भी सत्य नहीं है। उस उत्तम ज्ञानमें एकबार तुमने अपने प्रभुको हृदय समर्पण किया है। कुछ भी तुम्हें बाँध नहीं सकता। इसलिये तुम्हें स्वतन्त्रता और विकासका अद्‌भुत ज्ञान प्राप्त होना चाहिये। प्रेम महत्तमें शक्ति है। प्रेमकी शक्तिसे सारे आवरण जो तुम्हें प्रियतमके दर्शनसे अंधा रखते हैं—सरलतासे फाड़ दिये जा सकते हैं।

मनको शुद्ध करो! मनको शुद्ध करो! यह अब भी और सब समयके लिये धर्मका सम्पूर्ण और केवल अर्थ है। विचारधाराको सर्वोच्च रेखामें विकसित करो। उद्देश्यकी स्थिरताको अधिकाधिक बढ़ाओ। तब कुछ भी तुम्हें रोक न सकेगा। तुम अपने लक्ष्यकी ओर बाज-जैसे वेगसे अग्रसर होगे। क्या ही अच्छा हो यदि मनुष्य सब समय महान्‌का ही ध्यान करे? यह स्वतः ही मुक्ति है।

आलस्य छोड़ो और अपनी सम्पूर्ण प्रकृतिका पुनर्निर्माण करो। उस सर्वव्यापी सौन्दर्यकी ओर देखो। प्रकृतिके साथ सम्पर्क करो। वह तुम्हें बहुतसे पाठ जो अभी तुम्हें अज्ञात है, पढ़ायेगी। वह तुम्हें व्यक्तित्वकी महान् शान्ति की ओर ले जायगी। अपने चारों ओर दृश्यजगत् में भी अदृश्य ईश्वरको देखो। साक्षी बनो। कर्ता कर्मोंके प्रभावसे दब जाता है, यदि तुम कर्ममें भी साक्षी रहो। केवल आत्म-साक्षात्कार और आत्म-विश्लेषणसे ही सम्बन्ध रखो। वह तुममें सर्वोत्तम है, उसे पुष्ट करो। दूसरोंकी सम्मतियों-सुझावों पर ध्यान मत दो। बलवान् बनो। तुम्हारा आत्मा ही गुरु है। उसे महान् उद्देश्यों और विचारोंसे यहाँ तक भर दो कि वह स्वतः महान्‌को ही खोजे और प्रकट करे।

क्या तुम अपने भाईके रक्षक हो? क्या तुम उसके कर्मोंके साक्षी हो? किसने तुम्हें उसके ऊपर जज बनाया है? दूसरेके दुराचरणकी यत्किञ्चित् भी स्मृतिको नष्टकर दो। अपने-से ही सम्बन्ध रखो। तुम्हें अपनेमें ही तिरस्कार और आलोचना करनेके लिये पर्याप्त सामग्री मिलेगी। और तब भी तुम्हें आनन्दित करनेके लिये पर्याप्त 'साधन' मिलेगा। प्रत्येकका अपने लिये अपना ही विश्व होना चाहिये। तुममें

स्थित मनुष्यको मर जाने दो, जिससे ईश्वर प्रकट हो जाय। क्या शान्तिसे रहना अधिक उत्तम नहीं है? किसी बातके लिये भी अपनेको क्षुब्ध न करो। मनुष्यमें नहीं–ईश्वरमें विश्वास करो। वह तुम्हें रास्ता दिखायेगा और सन्मार्ग सुझायेगा।

इस संसारमें–इस अशांतिके समुद्रमें एक चट्टानकी भाँति खड़े रहो। इस बहुत्वके घोर जंगलमें एक सिंहकी भाँति चलो। सर्वशक्तिमान् तुम्हारे साथ है; परन्तु पहिले पार्थिव अथवा केवल शारीरिक शक्तिके लिये समस्त वासनाओंको कुचल डालो। विवेककी तलवारसे उस सबको, जो तुम्हारे मार्गमें मायासे आता है, दो टुकड़े कर डालो। किसी पर आज्ञा न चलाओ। अपने ऊपर भी किसीको आज्ञा न चलाने दो। मृत्युसे निडर हो जाओ, क्योंकि यदि वह इसी क्षण तुम्हें ग्रस ले, तो यह जानो कि तुम पहले ही से मार्ग पर आरुढ़ हो। वैसे निर्भय होकर चले चलो। इस विशाल जीवनमें मृत्यु केवल एक घटना मात्र है। मृत्युके परे भी आध्यात्मिक प्रगतिके लिए अवसर और सम्भावनाएँ हैं। प्रत्येक वस्तु अपने व्यक्तिगत पुरुषार्थ पर निर्भर है। ईश्वरकी कृपा सदा ही निकट है।

अपनी ओरकी प्रत्येक वस्तुका अध्ययन करो। और तुम जानोगे कि प्रत्येक वस्तुमें तुम्हारे लिये एक आध्यात्मिक सन्देश है। एकका ही सर्वत्र साम्राज्य है। वही एक जो कि बहुत्वके प्रत्येक भावमें स्थित है। सर्वव्यापी एकताकी पूजा करो। उस समय भी, जब कि बहुत्व अपनेको चंचल करनेवाली भिन्नतासे तुम्हें झूठा बनाये। सभी आकृतियाँ धोखा देती हैं, मनुष्यका कर्त्तव्य है कि वह इस धोखेको समझे और सब आकृतियोंके पीछे सत्यताको देखे। प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्मोंका स्वामी है। वही अपने बंधन तोड़नेवाला भी है। उसे अपने लिये सत्यता खोज निकालनी चाहिये, दूसरा कोई मार्ग नहीं है। प्रत्येक अपनी ही भित्तिपर खड़ा है। प्रत्येकको स्वयं ही युद्ध करना चाहिए। साक्षात्कार सदैव सम्पूर्णता एक व्यक्तिगत अनुभव है। अंत में हरएक अपना ही बचानेवाला तथा अपना ही स्वामी है।

व्यक्तिके प्रत्येक खण्डमेंसे दिव्यता समग्र एकताकी भाँति प्रकाशित होगी। यह ऐसी शिक्षा है जो धारण किये जानेपर महान् लक्ष्यकी प्राप्ति करायेगी।

•

अहङ्कारको मिटा दो : 26 :

फिर गुरुवाणीने मेरे आत्माके प्रति कहा–अपने शरीरके साथ इस प्रकार व्यवहार करो मानो वह तुमसे भिन्न वस्तु है। तुम उसे कहोगे यह करो, वह करेगा। अपनेको एक वस्त्रपर रक्खी हुई घड़ी समझो। अपने नित्यके आने-जानेका अध्ययन करो। तुम जानोगे कि उनमेंसे कितने व्यर्थ और बेकार हैं। अतः समयकी घटनापर अनुचित महत्त्व अथवा आसक्ति स्थापित मत करो। यदि शरीरको आध्यात्मिक नहीं बना सकते, तो भूल जाओ! नित्यके साधारण जीवनमें दिव्यता लाना कठिन अवश्य है–परन्तु यह परीक्षा है। केवल ऊँचाइयोंपर ही नहीं, प्रत्युत घाटियोंमें भी हमें ईश्वरके सम्मुख होना चाहिये, कितना सत्यरूपसे एकाग्र किया हुआ मन है जो कि अत्यन्त साधारण स्थितियों भी आत्माकी झाँकियोंको एकत्रित कर सकता है।

अहङ्कारके लेशमात्र चिह्नको भी मिटा डालो। जितना अधिक तुम अपने व्यक्तित्वका अध्ययन करोगे, उतना ही अधिक तुम्हें ज्ञात होगा कि प्रायः प्रत्येक अनुभवमें चाहे वह कर्मका हो या विचारका–अहङ्कार घुस पड़ता है। अहङ्कारको केवल जीतना ही नहीं है, उसे पूर्णतया कुचल डालना है। आत्मदोष अथवा आत्मग्लानिमें भी यह घृणित दृश्य उपस्थित होता है। साक्षात्कार-सम्पन्न पुरुष न तो दूसरोंको दोष लगाता है और न अपनेको। अधिक शक्तिमान् वस्तुओंसे आच्छादित होनेके कारण वह स्थितियोंकी अवहेलना करता है।

तुम अपनेको पहलेसे ही मरा हुआ देखो। जीवनमें भी अपने शरीरको पृथक कर लो। आत्माको देखो, वस्तुओंके रूपको नहीं। तब

तुम्हारी नयी और शुद्ध दृष्टिमें सम्पूर्ण जीवन एक नये प्रकाशमें देखा जायगा और नये ऊँचे तथा सर्वथा आध्यात्मिक रूपोंमें तुम पर व्यक्त होगा।

योग-सिद्धियोंकी खोज छोड़ दो। मिथ्याज्ञानकी वृद्धि या नाममात्रकी सिद्धियोंकी प्राप्ति स्वयं ही होती है। यह अहङ्कारको उत्तेजित करती और स्वार्थकी अधिकाधिक वृद्धि करती है।

आध्यात्मिक पद्धतिमें चेतनाका बहुत रीतियोंसे विकास होना एक मानी हुई बात है। जब कि यह आत्मसाक्षात्कारके ध्येयसे भी उत्तम स्थान पा जाती है, तो मार्गमें अनेक विघ्न और बाधायें आती हैं। अहङ्कारसे उतना ही सावधान रहो, जितना एक पागल कुत्तेसे। जैसे तुम विष या विषधर सर्पको नहीं छूते, उसी प्रकार सिद्धियोंसे अलग रहो और उन लोगोंसे भी, जो इनका प्रतिपादन करते हैं। अपने मन और हृदयकी सम्पूर्ण क्रियाओंको ईश्वरकी ओर सञ्चारित करो। आध्यात्मिक जीवनका दूसरा और क्या ध्येय होगा?

निराश्रय हो! अवश्य ही निराश्रय हो। अपनी निजी सम्भावनाओं और परमात्माकी कृपामें विश्वास रखो। दूसरोंका विश्वास तुम्हें अधिकाधिक असहाय और दुःखी बनायेगा।

यदि तुम्हें अपनेमें विश्वास नहीं है, तो अत्यन्त दुःखद अनुभव तुम्हें ऐसा करनेके लिए बाध्य करेंगे। नियम-पालनकी शक्ति महान् है। यह तुम्हारी पाशविक प्रवृत्तिको आध्यात्मिक ढाँचेमें पीस डालेगा। इनका केवल एक ध्येयहै और वह है तुम्हारे चरित्रका पुनर्निर्माण करना। तब हिचकना क्यों? तब वह चीज जो कि किसी भी क्षण अनुभव हो सकती है, उसे दूसरे जीवन तक क्यों टाल रखना? सच्चे बनो वत्स! योग्यता अथवा अयोग्यताका प्रश्न नहीं है। तुम्हारी मुक्ति निश्चित है, क्योंकि तुम्हें उच्च जीवनके लिए बाध्य किया जायगा। प्रत्येक व्यक्ति का यह भाग्य है। दैवीशक्तिको व्यक्त होना ही होगा।

एक महान् आध्यात्मिक निवृत्ति उसी प्रकार आवश्यक है। उन हजारों ही क्रोध दिलानेवाली बातोंका, जिन्हें कि समय ला सकता है,

क्यों ध्यान करते हो। स्वतन्त्र होओ, अनुभव करो, कि ये सब पूर्व संस्कारके फल हैं, जिनसे तुम्हें सर्वदा अलग रहना है। जो कुछ हो, होने दो। तुम्हारे बारेमें जो कहा जाय उसे कहने दो। तुम्हें ये सब बातें मृगतृष्णाके जलके समान असार होनी चाहिये। यदि तुमने संसारका सच्चा त्याग किया है, तो इन बातोंसे तुम्हें कैसे कष्ट पहुँच सकता है? पुरुषार्थमें विचार और आदर्शमें भी स्थिरचित्त हो। कला-कौशलके भवनमें समालोचक भिन्न-भिन्न चित्रोंका अध्ययन करता है। उनमें कुछ बहुत दुःखपूर्ण, कुछ बड़े सुन्दर होते हैं; लेकिन वह स्वयं चित्रित किये हुए भावोंसे प्रभावित नहीं होता। ऐसा ही तुम भी करो। जीवन एक कला-भवन है। अनुभव समयकी दीवारों पर लटके हुए बहुत सारे चित्रोंके समान है। यदि तुम्हें ऐसा करनेकी इच्छा है तो उनका अध्ययन करो।

किसी भावमें आसक्ति और किसी भावमें अरुचिसे अपनेको मुक्त रखो। अध्ययन करो, परन्तु प्रभावित न होओ। यह बात ध्यानमें रहे तो तुम वस्तुतः साक्षी बन जाओगे। अपने मन और अपने सब अनुभवोंका इस प्रकार अध्ययन करो, जैसे एक वैद्य शरीर और उसके रोगोंका अध्ययन करता है। अपने आपको समालोचनामें कुछ भी कसर मत रखना, तभी वास्तविक उन्नति होगी।

मार्ग लम्बा है, शिक्षाकी पद्धति अनेक जन्मोंको चाहती है। परन्तु मनुष्य अपनी गति तीव्र रखकर उसपर चल सकता है। और इस प्रकार इन पेंचीदे मार्गोंसे, जिनपर अपने अपने व्यक्तित्वकी सतहके ही ऊपर चलनेवाले इंद्रियाराम पुरुष चलते हैं, बच सकता है। आध्यात्मिक विषयों पर गम्भीरतासे और निरंतर अध्ययन करना तथा इच्छाको भावमें और विकारको आध्यात्मिक उत्साहमें ढालना-ये भी साधना के अंग हैं।

जबतक सम्पूर्ण प्रकृति आध्यात्मिक विचार और आशयसे भरपूर न हो जाय, सदैव सचेत रहो। वस्तु उसे समर्पण करो अपनी प्रत्येक, जो सब शुभ वस्तुओंका रचयिता है, जो कुछ भी तुम्हें

आध्यात्मिक मार्ग पर दृढ़ रखे उसका आलिङ्गन करो–भले वह मृत्युका भय ही क्यों न हो।

तुम वह छोटे पौधे हो जो पोषण चाहता है। कोई भी वस्तु जो तुम्हें बलवान् बनाये, उसे पकड़ रखो। शक्ति और धैर्यके साथ उससे चिपटे रहो। दृढ़, सच्चे, उत्कंठित और पवित्र बनो। प्रत्येक क्षण और अवसरका लाभ उठाओ। मार्ग लम्बा है। समय वेगसे निकला जा रहा है। मैंने तुम्हें कितनी ही बार उपदेश किया है–अपने सम्पूर्ण आत्मबलके साथ कार्य में लग जाओ! लक्ष्य तक पहुँचोगे!!

●

निरपेक्ष रहो : 27 :

गुरुवाणीने कहा :

मेरे पुत्र! तुम्हें यह सीखना होगा कि इस संसारमें कुछ कठिनाइयाँ हैं–जो तुम्हें सहन करनी हैं। वे पूर्वकर्मोंके फलस्वरूप तुम्हें अजेय प्रतीत होती हैं। जहाँ कहीं भी कर्ममें घबराहट, थकावट और आशाएं हैं, वहाँ अत्यन्त अन्धासक्ति भी है। अपना कार्य कर चुकने पर एक ओर खड़े होओ। कर्मके फलको समयकी धारामें प्रवाहित हो जाने दो। कार्य समाप्त कर चुकने पर तुम्हारा मन्त्र हो–"हाथ खींचो!" अपनी शक्तिभर कार्य करो। और तब अपना आत्मसमर्पण करो। किन्हीं भी घटनाओंमें हतोत्साह न होओ। कर्मोंके फल शुभ हों या अशुभ, यह गौण बात है। उनका त्याग करो। और यह निश्चित है कि कर्ममें उसकी पूर्णता इतनी महत्त्ववाली नहीं है जितनी कि कर्मके द्वारा व्यक्तित्वकी पूर्णता, जो कि लक्ष्य होना चाहिये।

तुम्हारा अपने ही कर्मों पर अधिकार हो सकता है, दूसरोंके कर्मों पर नहीं। उसका कर्म एक है, तुम्हारा दूसरा है। आलोचना न करो। आशा न करो! भय न करो, सब अच्छा होगा। अनुभव आता और जाता है। खिन्न न होओ! तुम दृढ़ भित्ति पर खड़े होओ। अनुभव तुम्हें मुक्त होना सिखा देगा। जो भी हो, उसकी कोई चिंता नहीं। कर्मके

बन्धनमें बाँधनेकी मूर्खता मत करो। क्या मेरे कर्मका घेरा अनन्त नहीं है? कर्म-योगके महान् उद्देश्योंको और सच्चे कर्मको, ईर्ष्या और आसक्तिसे भ्रष्ट न करो। लड़कपनके विचार तुम्हारे ऊपर अधिकार न जमाने पायें।

प्रतीक्षा न करो। पूर्ण सङ्कल्प न करो। संस्कारोंको अपने व्यक्तित्वको बहाने दो-चाहे जहाँ कहीं भी उनके प्रवाह जायँ। याद रखो, तुम्हारी सच्ची प्रकृति महासागर है। तुम निरपेक्ष रहो। मनको सूक्ष्म रूपमें एक शरीर ही समझो। अतः अपनी तपस्याको एक मानसिक तपस्या बनाओ। अपनी सम्पूर्ण चेष्टाओंको केवल शारीरिक चेष्टा समझो। अलग रहो-तुम आत्मा हो। केवल अत्मासे ही सम्बन्ध रखो! अपने जीवनको आपही मार्ग दिखाओ। अपने-आपके प्रति सच्चे रहो।

मेरे पुत्र! जीवनको शान्तिसे समझो। हर समय शान्त रहो। किसी बात पर अपनेको क्षुब्ध न करो। तुम्हारी शारीरिक प्रकृति अत्यंत चञ्चल और राजसिक है। किन्तु अपने रजोगुणको नष्ट न करो। उसे आध्यात्मिक रूप दो। यह एक रहस्य है। अपनी प्रकृतिका इस भाँति संयमन करो कि किसी भी क्षण अपनी क्रियाशील प्रकृतिको शान्त कर सको और सर्वथा ध्यानावस्थित रह सको। उदार बनो। तुम्हारे सम्बन्ध उन लोगोंसे, जिनसे तुम्हारा व्यावहारिक सम्बन्ध है, ऐसे हो कि तुम उनके अन्दरकी महत्ताके साक्षी बने रह सको। यदि तुम्हें त्रुटियाँ दीखें ही तो पहले दूसरेकी आँखमें दीखनेकी अपेक्षा अपनीमें ही दीखे। उसी समयके अनुभवसे दबो मत-दस दिन हो जायँ, तब भी क्या?

धार्मिक जीवनका सम्पूर्ण अर्थ अहङ्कारसे युक्त होना है। यह इतनी गहरी जड़ पकड़े हुए है कि एक दीर्घकालके रोगकी भाँति इसका मूल निकालना अत्यन्त कठिन है। यह असंख्य रूपोंमें वेष बदलता है। परन्तु इसके सम्पूर्ण वेषोंमें-से कोई भी इतना छली और अशुभ नहीं है, जितना कि अध्यात्म वेष है। लापरवाहीसे यह विश्वास करते हुए कि तुम आध्यात्मिक ध्येयके लिए कार्य करते हो, तुम्हें ज्ञात होगा कि

उसकी तहमें बहुधा स्वार्थ ही होता है, जो तुम्हें प्रभावित करता है। इसलिये तीक्ष्ण दृष्टि रखो।

व्यक्तित्व पर विजय और उसके सर्वथा नाशके द्वारा ही श्रेष्ठ अव्यक्त समझा और साक्षात् किया जा सकता है। अपने-आपके प्रति मर जाना, जिससे पुरुष सच्चा जीवन प्राप्त करे, आध्यात्मिक जीवनका ध्येय है। मायाकी चकाचौंधसे ही संतुष्ट रहकर बहुत लोग सूर्य-दर्शनमें असफल होते हैं। इसे याद रखो कि वास्तविक अमरत्व केवल स्वार्थमय व्यक्तित्वको पूर्णतया नष्ट करनेसे ही प्राप्त हो सकता है। अव्यक्तके ऊपर अपने मनको स्थिर करो। यह महान्का प्रकाश है जो आत्मविजयी व्यक्तित्वके द्वारा ही प्रकाशित होता है। यह प्रकाश जब पूरा चमकता है, तब निर्वाणकी ज्योति प्रकट होती है।

●

विश्व-प्रेमी बनो : 28 :

ध्यानके समयकी शांतिमें गुरु-वाणीने आत्माको इन आनन्ददायी शब्दोंसे सम्बोधित किया :

मेरे पुत्र! जब तक विचार है तबतक उसके रूप गुण रहते हैं। इसी कारण देवता और सम्पूर्ण आध्यात्मिक सत्यताएँ अवश्य ही सत्य हैं। ब्रह्माण्ड के मण्डल अगणित हैं। परन्तु उन सबमें ब्रह्मकी ज्योति प्रकाशित होती है। ब्रह्मसाक्षात्कार करने पर तुम्हारे लिये सब भूमिकाएँ एक हो जायँगी। अतः सब सत्योंको स्वीकार करो और ईश्वरके सब रूपों की पूजा करो। उदार तथा विश्व-प्रेमी बनो। धर्मके मण्डलको विस्तृत करो।जीवनकी सब स्थितियोंमें अपनी धर्मबुद्धि बनाये रखो। जहाँ कहीं भी अनुभव हो, जो कुछ भी उसका लक्षण हो, आध्यात्मिक रूपसे जो भी भाष्य किया हो, वहाँ ही प्रभुकी वाणी सुनायी पड़ सकती है। सब बातोंमें दूसरी ओर देखना सीखो, तब तुम कट्टर अन्ध-विश्वासी नहीं बनोगे। आध्यात्मिक रूप दिये जानेसे नीचसे नीच कर्म भी दिव्य

हो सकते हैं। तब सम्पूर्ण जगत् भी दिव्य हो जायगा। समस्त भेद-बुद्धिको निकाल डालो। दृष्टिकी सङ्कीर्णताको नष्ट कर दो, दृष्टिकोण व्यापक बनाओ, जबतक वह अनन्त और सर्वग्राहक न बन जाय। प्रभु कहते हैं-"जहाँ कहीं भी पवित्रता और धार्मिकता है वहाँ समझो कि मैं प्रकट हूँ।" छोटे पौधेके चारों ओर बाड़ लगाना आवश्यक है। उन नन्हेंसे पौधेको बहुत दूर फैला हुआ बट बनना होगा। तब जो भी उसकी छायामें आये, उसको छाया तथा आराम देना होगा। इसी प्रकार भेद-बुद्धि मुख्य विचारोंकी वृद्धिके लिए लाभदायक हो सकती है। एक समय आयेगा जब विशेष विचार विश्वभावको धारण करेगा। मेरे पुत्र! उदार होओ। उदार होओ। उदारचित्त होनेकी बान डाल लो; क्योंकि जो कुछ बुद्धि द्वारा प्राप्त करना है, उसे भाव द्वारा भी प्राप्त करना होगा।

सम्पूर्ण जगत्से समान प्रेम करो। प्रत्येक व्यक्तिके जीवनमें बीजरूपसे वही सुन्दर प्रकाश, जो कि तुम अपने प्रिय भ्रातामें देखते हो, चमकता है। विश्व-प्रेमी बनो। अपने शत्रुको भी प्यार करो। मित्र और शत्रुके बीचमें भेद केवल ऊपरी बात है। गहराईमें नीचे सब ब्रह्म है। प्रत्येक वस्तुमें और प्राणीमें ईश्वरको देखना सीखो। तो भी पर्याप्त सावधानी रखो कि अप्रियता स्वभावका विरोध दूर रहे। सच्चे अर्थमें सबसे सच्चा सम्बन्ध वह है, जो सम्बन्धरहित है और इसीलिये आध्यात्मिक है। विशेषकी अपेक्षा सर्वव्यापीको देखो। शारीरिक व्यक्तित्वकी अपेक्षा आत्माको देखो। तभी तुम अपने मित्रके साथ अधिक घनिष्टतासे संबद्ध होगे। तब तुम्हें मृत्यु भी अलग नहीं कर सकेगी। सब भेदोंपर विजय करके अपने आत्मामें शत्रुका ध्यान ही नहीं रहेगा।

उसे देखो, जो प्रत्येक रूपमें सुन्दर है। अधिकार पानेकी इच्छाकी अपेक्षा पूजा करो। प्रत्येक नाम और रूपको अपने लिये एक आध्यात्मिक संदेह होने दो।

सब विचार उस स्वभावसे सम्बन्ध रखते हैं जिससे वे निकलते हैं। इसलिये दूसरेकी बात सुननेमें उसके भाषणके तर्ककी अपेक्षा

साक्षात्कारका पक्ष देखो। तब कोई भी वाद-विवाद न होगा और तुम्हारा निजी अनुभव नयी भावनाएँ प्राप्त करेगा। मौन भी बहुधा सुनहला है तथा बोलना और तर्क करना अपनी शक्तियोंका क्षय करना है। याद रखो, अपने मोती सूकरोंके सामने कभी न डालो। इसी भाँति सब भावनाएँ स्वभावापेक्षी हैं। अतः आसक्त होनेकी अपेक्षा साक्षी हो। इस बातको जानो कि विचार करना और अनुभव करना, दोनों ही मायामें है। उस मायाको आध्यात्मिक बनाना है। अतः आत्माको आत्माके द्वारा जीतो और अनासक्त रहो। आज जो कुछ भी तुम सोचते और अनुभव करते हो, वैसा ही कल न सोचना। सर्वोपरि बात यह है कि अपने सत्य-स्वभावमें तुम विचार और भावना, दोनोंसे ही स्वतन्त्र हो। वे तुम्हारे सत्य-आत्माको प्रकट् करने में केवल सहायता करते हैं। इसलिये अपने विचारों और अनुभवोंको महान् विराट् तथा संपूर्ण स्वार्थपरकताके ऊपर होने दो। तब इस संसारके घोर अंधकारमें चाहे पहले वह धुंधला ही हो, सनातन प्रकाश दीखेगा।

●

सच्चा संन्यास : 29 :

गुरुने कहा :

कलके लिये योजनाएँ मत बनाओ। केवल संसारी जीव ही उसे बनाते हैं। स्थितियोंसे स्वतन्त्र होओ और अनिश्चितताको अपनी निश्चितता बनाओ और संन्यासी-प्रतिज्ञाओंके अनुकूल जीवन व्यतीत करो। कल क्या होगा, इस बात पर क्यों ध्यान देते हो? वर्तमान तुम्हें जिस रूपमें प्राप्त है, उसीमें सन्तुष्ट रहो और अति सज्जन रीतिसे रहो। अपने प्रियतमका नाम प्रत्येक भूत-भविष्य और वर्तमानके अनुभवोंकी स्थितिमें जोड़ो। इस प्रकार वे आध्यात्मिक बन जायेंगे! उनको ऐसे समझो जैसे तुम दीवार पर लगे चित्रोंका अध्ययन कर रहे हो। उनके प्रभाव दुःखपूर्ण, साधारण अथवा मोहक हो सकते हैं। तुम

तो केवल समालोचक हो। वे चाहे शुभ हों या अशुभ, तुम्हारा आत्मा अनुभवोंसे परे है।

और संस्थाओंकी लाभ-हानि तथा विचारोंकी महत्ताकी प्रशंसा भले कर लो, किन्तु उनके साथ एकमत न होओ। धार्मिक जीवन नितान्त व्यक्तिगत तथा स्वाश्रित है। वह एक उपासना-मंदिरमें उत्पन्न हो सकता है, किन्तु उसे इसके बाहर जाना होगा। नियममें-से नियमके परे होना साक्षात्कारका मार्ग है-यह बात समझो और स्वतंत्र हो जाओ। जो काम तुम्हें मिले उसे कर डालो! यदि सङ्गठन ही आवश्यक हो, तो विचारोंका सङ्गठन करो। किन्तु कभी भी शुद्ध सङ्गठित रूपके विस्तारका उद्योग न करना। कोई भी सङ्गठन तुम्हें नहीं बचा सकता। तुम्हें अपने-आपको ही बचाना है। प्रायः सभी सङ्गठन, भले ही वे कितने भी आध्यात्मिक क्यों न हों और उनके आशय कितने ही असाम्प्रदायिक हों, संसारमें भ्रष्ट हो जाते हैं।

मंदिरकी पूजासे सावधान रहो। पन्थ और सम्प्रदायसे अलग रहो। सबमें जो अच्छाइयाँ हैं, उन्हें ग्रहण करो। उस उद्गमके, जिससे तुम्हें मन्त्र प्राप्त हुआ है, सच्चे बनो। श्रद्धा और प्रेम रखो। आशा और सन्तोष तुम्हारे सम्बल हों। माया के ये सब आवरण तुम्हारे लिये शीघ्र ही फाड़ दिये जायँगे और तुम मुझे-अपने प्रियतमको-स्वभावमें देखोगे। मेरे व्यक्तित्वसे, विशेषतया उसके ज्ञानसे तुम बँधो मत। मेरा सत्य-स्वरूप वह है, जो मेरी शिक्षासे भावित हुआ। जैसा मैं हूँ, वैसा जानो जो वह नहीं था! आत्मदर्शन कर लेने पर बन्धनों और बहुत्वके ज्ञानकी तुम्हारे ऊपर कोई सामर्थ्य न रहेगी। मैं बाह्य नहीं हूँ। मैं अन्तरतममें रहता हूँ। मैं तुम्हारे विचारमें रहता हूँ। मैं तुम्हारे भावके साथ हूँ। देश और कालके सम्बन्धका आत्मापर कोई वश नहीं। वे अध्यात्म-मार्गमें टिक नहीं सकते। मैं तुम्हारा अन्तर्यामी हूँ। असंख्य बार मुझसे अलग जन्म लो। भले ही मृत्युके समय भी पृथक् करनेवाले आचरण हों तो भी कोई हानि नहीं। प्रेम और साक्षात्कारमें कोई अन्तराल नहीं है। तुम्हें यह आवश्यक हो कि तुम यत्न करो और

मुझमें पृथक् रूपसे स्थित हो, फिर भी मैं परदोंमेंसे तुम्हें देखता हूँ। यद्यपि तुम मुझे नहीं देखते; फिर भी मैं नित्य तुम्हारे साथ हूँ। तुम इसे जानो या न जानो, फिर भी समय आयेगा जब तुम्हें अनुभव होगा। हाथी के दाँत बाहर निकलने पर कभी अंदर नहीं मुड़ते। उसी प्रकार गुरुका प्रेम और अन्तर्दृष्टि एक बार दान किये जाने पर सदैवके लिये दान किये गये हैं।

मेरे सेवक बनकर तुमने अपनेको मुक्त कर लिया है। तुम्हारी मुक्ति और मेरे लिये तुम्हारी सेवामें तारतम्य है। यद्यपि तुम मेरे लिये श्रम करते हो, फिर भी मेरे लिये उस श्रमकी अपेक्षा तुम्हारा प्रेम और श्रद्धा विशेष मूल्यवान है। विश्व अनन्त है और काल अविनाशी, किन्तु मैं सदा तुम्हारे और तुम्हारी प्रार्थनाके पीछे हूँ।

तुम्हें किसी भी रूपकी आवश्यकता नहीं। संन्यासी भावनाका ही महत्त्व है, संन्यासी वेषका नहीं। यही सच्चा संन्यास है। सच्चा संन्यास विद्वत्संन्यास है। प्रदीप्त अन्तर्दृष्टिसे सम्बद्ध अपना नाम लक्ष्यके जिज्ञासुओंमें लिखाओ। संन्यासी होनेमें अनन्त विकास है। वेष कुछ नहीं है, जीवन सबकुछ है।

अपनी शक्तिमें इन्द्रके समान होओ। स्थिरतामें हिमालयके समान होओ। ऊपर स्वार्थरहित होकर अपने आत्मासे सम्पर्क करो। मेरा नाम तुम्हारा मन्त्र हो।

तुम्हारा योग मेरे साथ तुम्हारे आत्माकी एकता हो। तुम्हारा साक्षात्कार वह जीवित ज्ञान हो कि सब वस्तुओंके हृदयमें और तुम एक ही हैं। भिन्नता ही मृत्यु है और एकता ही जीवन है।

तुमने मेरी वाणी सुनी है, मेरी शिक्षा प्राप्त की है। अब तदनुकूल आचरण करो। अनन्त प्रेम करो। निःस्वार्थ कार्य करो। मेरे यंत्र बनो! अपना व्यक्तित्व मेरा होने दो। शिवोऽहम् शिवोऽहम् कहो। मैं वह हूँ। मैं वह हूँ।

●

नित्य साक्षात्कार : 30 :

गुरुदेवके इन शब्दोंको नित्यप्रति ध्यानके समय सुनकर मुझे गुरु और शिष्यके बीचका सच्चा सम्बन्ध ज्ञात हुआ। मेरा एक अविचल नित्य साक्षात्कार हुआ है। मैं जानता हूँ कि जीवन तथा मृत्युमें निकट और परे एक महान् चैतन्य सत्ता सदैव है। वह सत्ता देश और कालसे अबाधित है। वह किसी भी पृथक्त्वको नहीं जान सकती। और ज्यों ही एक महान् ज्योतिने मुझे घेर लिया। गुरुदेवके प्रति मैं चिल्ला उठा :

अनुग्रह विग्रह! आपने अपनी कृपासे मुझे अन्धकारमें से उठा लिया है। मैं सर्वथा कुछ नहीं था। ऐसी स्थितिसे उठाकर, जैसा मैं हूँ वैसा बना दिया है। मैं वह भक्त हूँ जो अपनेमें अनन्त शक्तिको जानता है। बहुत समयसे मैंने आपकी वाणी और एक गीत जो कि पहले कभी नहीं सुना, सुना है। ऐसा मनमोहक गीत मैंने उन्मत्तकी भाँति सुना। किंतु मेरा निजी उत्तर चञ्चलतापूर्ण और अशान्त था। मैंने जो कुछ सुना वह समझा नहीं। दयालो! इसके पहले आपके मुखकी ज्योति अत्यन्त जाज्वल्यमान थी। मैंने आपका वास्तविक स्वरूप नहीं देखा। इस प्रकार अज्ञान और चञ्चलतासे मैंने वह सम्पत्ति, जिसे आपने मुक्तहस्तसे प्रदान की, नष्ट कर दी। गुरुदेव! मैंने आपकी ही सत्तामें अत्यंत दुष्ट पापीकी भाँति पाप किया है। और उस प्रेम और आशीर्वाद पर–जिन्हें आपने मुझपर प्रकट किये, मैंने अपनी विषमताएँ डाल दीं। मैं आपके सर्वथा अयोग्य था। अपने मदमें मैंने आपको भुला दिया और अपने–आपको ही मनुष्योंके नेताके सिंहासन पर बैठाया, जिससे लोग कहें 'देखो वह कितना महान् है।' किन्तु प्रभो! अब मैं समझ गया। मलिन हाथोंसे मैंने आपकी शिक्षाको भ्रष्ट किया, आपकी सत्ताको नष्ट किया; परन्तु आपकी कृपा अनन्त है! दीनवत्सल, मेरे प्रति आपका प्रेम अवर्णनीय है। आपका स्वभाव दैवी है। आपका अपने शिष्यके प्रति स्नेह जननीसे भी अधिक है। स्वामिन्! आपने अपनी शक्तिसे मेरी रक्षा की है। जबतक मैं पूर्ण न बन गया तबतक जिस

प्रकार कुम्हार मिट्टीको जिस किसी भी रूपमें ढालता है, उसी प्रकार आपने मुझे ढाला है। आपकी कृपा आपका धैर्य, आपकी मधुरता अनंत है। मैं आपकी स्तुति करता हूँ। भगवन्! मेरे हाथ, पैर, जिह्वा नेत्र, श्रोत्र, मेरा सम्पूर्ण शरीर, मेरा मन, इच्छा, भाव, मेरा सम्पूर्ण व्यक्तित्व, अपने प्रति मेरी भक्तिकी ज्वालाओंमें स्वाहा होने दो और शुद्ध होने दो। अपना शुभ-अशुभ और सब जैसा मैं था-हूँ और कभी हूँगा-जीवनके बाद पुनः जीवनमें आपको समर्पित करता हूँ। आप मेरे शुद्ध एवं निजी आत्मा ही हैं। मुझे कुछ भी न रखने दें। अपने हृदयके अतिरिक्त मेरा दूसरा घर न होने दें। अब और सदाके लिए मेरा जीवन पवित्रताका सूर्य होने दें। मेरे आपको प्रणाम हैं।

हरि ॐ तत्सत्।

•

ॐ तत्त्वमसि : 31 :

और इसके बाद भी ध्यानकी घड़ियोंमें मैंने अपने भीतर तथा अपने चारों ओर एक जीवित सत्ताका अनुभव किया और आनन्दमें भरकर मैंने महामंत्र सुना तथा दोहराया ॐतत्त्वमसि-ॐतत्त्वमसि। तेरी शक्ति अनन्त है। उठो, जागो और जबतक कि लक्ष्य न प्राप्त हो, ठहरो मत। तुम ब्रह्म हो। तुम ब्रह्म हो। तुम राम हो। ॐ तत्सत्।

•

.....एफ.जे. एलेक्जेण्डर द्वारा लिखित अंग्रेजीकी यह पुस्तक (In the Hours of Meditation) ''ध्यानके समय'' एक महात्मा ने दी थी और इससे ठाकुर झगरुसिंह जी के जीवनमें बहुत ही महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए थे। उन्होंने ही इस पुस्तकके कुछ अंश अनुवाद करके सुनाये। यह मुझे बहुत प्रिय लगी। इससे मुझे बहुत आश्वासन मिला। अपने जीवनके निर्माणके लिये एक दिशा मिली। मेरे कहनेपर उन्होंने पुस्तकका अधिकांश अपनी उर्दूमिश्रित भाषामें बोल दिया और मैंने संस्कृतप्रधान हिंदीमें लिख लिया। कहना नहीं होगा कि मैंने अबतक अंग्रेजी भाषा या लिपि नहीं सीखी है। इसलिये मूल ग्रन्थके साथ इस अनुवादका कितना सम्बन्ध है, यह मैं नहीं कह सकता। इतना अवश्य कह सकता हूँ कि इस पुस्तककी भाषा और भाव पर मेरी इतनी ममता हो गयी है कि इस पुस्तकमें मेरा हृदय बोलता हुआ दीखता है। बहुतोंने इस पुस्तककी प्रतिलिपि करवायी और इससे लाभ उठाया.....

अखण्डानन्द सरस्वती

आनन्दकानन प्रेस
डेढ़सीनीम, वाराणसी • फोन : 2392337